Śivasvarodaya

॥ श्री ॥

शिवस्वरोदय.

श्रीशिवपार्वती संवाद.

ताकौ

अतिउत्तम भाषाटीका बनवायकर

पंडित श्रीधर शिवलालजीके

"ज्ञानसागर" छापखानेके

मालिकनें

स्वकीय यंत्रालयमें मुद्रित किया.

मुंबई.

फाल्गुन कृष्ण. १ संवत् १९५२ सन १८९६.

॥ श्रीः ॥

अनुक्रमणिका.

इति शिवस्वरोद अनुक्रमणिका समाप्ता.

॥ श्रीः ॥

शिवस्वरोदयः ।

भाषाटीकासमेतः

श्रियःकान्तंपरंदेवं नत्वासर्वोत्तमंमया ॥
शिवस्वरोदयस्यैषाभाषाटीकाविरच्यते ॥ १ ॥

श्रीगणेशायनमः ॥ महेश्वरंनमस्कृत्यशैलजांगणनायकं॥गुरुंचपरमात्मानंभजेसंसारतारणं ॥१॥

अर्थ–महादेवको नमस्कार कर पार्वती गणेश गुरु इनको नमन कर संसारतारक परमात्माको भजताहूं ॥ १ ॥

॥ श्रीदेव्युवाच ॥ देवदेवमहादेवकृपांकृत्वाममोपरी॥सर्वसिद्धीकरंज्ञानंकथयस्वममप्रभो ॥२॥

अर्थ–पार्वती महादेवजीसे पूछतीहैं, हे देवनकेदेव महादेव मेरेपर कृपा करके हे प्रभो मेरेवास्ते सर्व सिद्धिकारक ज्ञान कहो ॥ २ ॥

कथंब्रह्मांडमुत्पन्नंकथंवापरिवर्तते ॥
कथंविलीयतेदेववदब्रह्मांडनिर्णयं ॥ ३ ॥

अर्थ–ब्रह्मांड कैसे उत्पन्न भया और कैसे स्थित हो रहाहैं और कैसे प्रलय होताहै हे देव ब्रह्मांडके निर्णयको कहो॥३॥

॥ ईश्वरउवाच ॥ तत्वाद्ब्रह्मांडमुत्पन्नंतत्वेनपरिवर्तते॥तत्वेविलीयतेदेवितत्वाद्ब्रह्मांडनिर्णयः ॥४॥

अर्थ–महादेवजी बोले तत्त्वसे ब्रह्मांड उत्पन्न भया तत्त्वसेही पालना होती है तत्त्वमेंही लीन होताहै हे देवी ऐसे तत्त्वसेही ब्रह्मांडका निर्णय है ॥ ४ ॥

॥ देव्युवाच ॥ तत्वमेवपरंमूलंनिश्चितंतत्ववादिभिः ॥ तत्वस्वरूपंकिंदेवतत्वमेवप्रकाशय ॥ ५ ॥

अर्थ–पार्वती पूछतीहै हेदेव तत्त्वदर्शी जनोनें तत्त्वही परम मुल निश्चित कियाहै सो तत्त्वका क्या स्वरूपहै. यह, तुमही प्रकाशकरो ॥ ५ ॥

ईश्वरउवाच ॥ निरंजनोनिराकारएकोदेवोमहेश्वरः तस्मादाकाशमुत्पन्नमाकाशाद्वायुसंभवः ॥ ६ ॥

अर्थ–शिवजी बोले, निर्लेप निराकार एक महेश्वर देव है तिस्से, आकाश उत्पन्न भया आकाशसे वायु उत्पन्न भया ६

वायोस्तेजस्ततश्चापस्ततःपृथ्वीसमुद्भवः ॥ एतानिपंचतत्वानिविस्तीर्णानिचपंचधा ॥ ७ ॥

अर्थ–वायुसे अग्नि अग्निसे जल जलसे पृथ्वी उत्पन्न भई है येही पांचतत्त्व पांचप्रकारसे पंचीकरण होके विस्तृत होरहेहैं ७

एतैर्ब्रह्मांडमुत्पन्नंतैरेवपरिवर्तते ॥ विलीयतेचतत्रैवतत्रैवरमतेपुनः ॥ ८ ॥

अर्थ–तिनसे ब्रह्मांड उत्पन्न भया तिनसेंही स्थिति पालना होती है तिनमेंही लीन हो जाता है फिर सूक्ष्म रूपसे तहांही रमण करता है ॥ ८ ॥

पंचतत्वमयंदेहंपंचतत्वानिसुंदरि ॥ सूक्ष्मरूपेणवर्ततेज्ञायतेतत्वयोगिभिः ॥ ९ ॥

अर्थ–हे सुंदरी पांच तत्त्वोंकांही देह है तहां शरीरमें सू

क्ष्मरूप करके पांच तत्त्वही वर्त्ततेहैं वे तत्त्व योगीजनोंसे जाने जाते हैं ॥ ९ ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामिशरीरस्थंस्वरोदयं ॥ हंसचार स्वरूपेणभवेज्ज्ञानंत्रिकालजं ॥ १० ॥

अर्थ अब इससे आगे शरीरमें स्थित हुए स्वरोदय, स्वरकी उत्पत्तिको कहुंगा. इसके हंसचार स्वरूप करके त्रिकालका ज्ञान होता है ॥ १० ॥

गुह्याद्गुह्यतरंसारमुपकारप्रकाशनं॥ इदंस्वरोद यंज्ञानंज्ञानानांमस्तकेमणिः ॥ ११ ॥

अर्थ–यह स्वरोदय ज्ञान गुह्य वस्तुओंसेभी गुह्य, गुप्त है उपकारका प्रकाशक सारहै सब ज्ञानोंका शिरोमणी है॥११॥

सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरंज्ञानंसुबोधंसत्यप्रत्ययं ॥ आश्च र्यंनास्तिकेलोकेआधारंत्वास्तिकेजने ॥ १२ ॥

अर्थ–यह सूक्ष्मसेभी अति सुक्ष्म स्वरोदय सुंदर बोधकारकहै सत्यका निश्चय करानेवाला है नास्तिक जनोंमें आश्चर्य है आस्तिक जनोंका आधारहै ॥ १२ ॥

॥अथशिष्यलक्षणं॥ शांतेशुद्धेसदाचारेगुरुभक्त्यै कमानसे॥दृढचित्तेकृतज्ञेचदेयंचैवस्वरोदयं॥१३॥

अर्थ–अब शिष्यका लक्षण कहतेहैं शांत स्वभाववाला, शुद्ध अंतःकरण वाला, श्रेष्ट आचरणवाला गुरुकी भक्तिमें एकाग्र मनवाला दृढचित्त कृत ऐसे शिष्यको स्वरोदय शास्त्र देना चाहिये ॥ १३ ॥

दुष्टेचदुर्जनेक्रुद्धेअसत्येगुरुतल्पगे ॥
हीनसत्वेदुराचारेस्वरज्ञानंनदीयते ॥ १४ ॥

अर्थ–दुष्ट दुर्जन क्रोधि नास्तिक. गुरुस्त्रीके संग मैथुन करनेंवाला धीरज रहित दुराचारी ऐसे जनको स्वरका ज्ञान न देना ॥ १४ ॥

शृणुत्वंकथितंदेवीदेहस्थंज्ञानमुत्तमं ॥
येनविज्ञानमात्रेणसर्वज्ञत्वंप्रणीयते ॥ १५ ॥

अर्थ–हेदेवी देहमें स्थितहुये मेरेसे कहे हुए उत्तम स्वरोदय ज्ञानको सुन इसके जाननें मात्रसे सर्वज्ञता होतीहै ॥ १५ ॥

स्वरेवेदाश्चशास्त्राणिस्वरेगांधर्वमुत्तमं ॥
स्वरेचसर्वंत्रैलोक्यंस्वरमात्मस्वरूपकम् ॥ १६ ॥

अर्थ–स्वरमें संपूर्ण वेद और शास्त्रहै स्वरमें उत्तम गान विद्या है स्वरमें ही संपूर्ण त्रिलोकीहै स्वरही आत्मस्वरूपहै ॥ १६ ॥

स्वरहीनंचदैवज्ञंनाथहीनंयथागृहं ॥ शास्त्रहीनं यथावक्काशिरोहीनंचयद्वपुः ॥ १७ ॥

अर्थ–स्वरविद्यासे हीन ज्योतिषी, स्वामीसे हीन घर शास्त्रसे हीन मुख, शिरकेविना देह, ये सब कछु नहीं है, ॥ १७ ॥

नाडीभेदंतथाप्राणंतत्वभेदंतथैवच॥ सुषुम्नामि श्रभेदंचयोजानातिसमुक्तिगः ॥ १८ ॥

अर्थ–नाडीभेद प्राणतत्त्वोंका भेद सुषुम्ना आदि मिश्रित तीन नाडियोंका भेद इनको जो जानता है वह मोक्षको प्राप्त होताहै ॥ १८ ॥

साकारेवानिराकारेशुभंवायुबलेकृते ॥ कथयं तिशुभंकेचित्स्वरज्ञानंवरानने ॥ १९ ॥

अर्थ—हे वरानने वायुका साकार अथवा निराकार बल लक्षण होनेमें स्वरके ज्ञानकोही कित्तेक जन शुभाशुभ कहतेहैं ॥ १९ ॥

ब्रह्मांडखंडपिंडाद्यंस्वरेणैवहिनिर्मितं ॥ सृष्टिसंहारकर्ताचस्वरःसाक्षान्महेश्वरः ॥ २० ॥

अर्थ—ब्रह्मांडके खंड तथा पिंड· शरीर आदिक स्वरसेही रचे हुयहैं सृष्टिके संसारको करनेंवाला महेश्वरभी साक्षात् स्वर स्वरूपहै ॥ २० ॥

स्वरज्ञानात्परंगुह्यंस्वरज्ञानात्परंधनं ॥ स्वरज्ञानात्परंज्ञानंनवादृष्टंनवाश्रुतं ॥ २१ ॥

अर्थ—स्वरके ज्ञानसे उत्तम गुह्य स्वर ज्ञानसे उत्तम धन स्वर ज्ञानसे उत्तम ज्ञान न तो देखा न सुना ॥ २१ ॥

लक्ष्मिप्राप्तिःस्वरबलेकीर्तिःस्वरबलेसुखं ॥ शत्रुं हन्यात्स्वरबलेतथामित्रसमागमः ॥ २२ ॥

अर्थ—स्वरके बल होनेंमे शत्रुको मारदेवे तथा मित्रका समागम होजावे स्वरके बल होनेमें लक्ष्मीकी प्राप्ति स्वरके बल होनेंसे कीर्ति तथा सुख होता है ॥ २२ ॥

कन्यासिद्धिःस्वरबलेस्वरबलेराजदर्शनं ॥ स्वरेणदेवतासिद्धिःस्वरबलेक्षितिपोवशः ॥ २३ ॥

अर्थ—स्वरके बलसे कन्याकी प्राप्ति अर्थात विवाह होवे राजाका दर्शन होवे स्वरसेही देवताकी सिद्धी और स्वरसे राजाको वशमें करना होताहै. ॥ २३ ॥

स्वरबलेगम्यतेदेशेभोज्यंस्वरबलेतथा ॥ लघुदीर्घंस्वरबलेमलंचैवनिवारयेत् ॥ २४ ॥

अर्थ--स्वरके बलसे देशान्तरमें जाना और उत्तम भोजन प्राप्त होताहै स्वरके बलसे लघुशंका और मलका त्याग भी होताहै ॥ २४ ॥

सर्वशास्त्रपुराणादिस्मृतिवेदांगपूर्वकं ॥
स्वरज्ञानात्परंतत्वंनास्तिकिंचिद्वरानने ॥ २५ ॥

अर्थ--हे वरानने संपूर्ण शास्त्र पुराण आदि स्मृति और वेदांग इत्यादिक कछुभी स्वरज्ञानसे परे उत्तम तत्त्व नहींहै ॥ २५ ॥

नामरूपादिकाःसर्वेमिथ्यासर्वेषुविभ्रमः ॥
अज्ञानमोहितामूढायावत्तत्वंनविद्यते ॥ २६ ॥

अर्थ--जबतक तत्त्व नहीं जाना जाताहैं तबतक सबोंमें नाम रूप आदिक मिथ्या भ्रम रहता है और अज्ञानमोहित जनभी तबतकहैं ॥ २६ ॥

इदंस्वरोदयंशास्त्रंसर्वशास्त्रोत्तमोत्तमं ॥
आत्मघटप्रकाशार्थंप्रदीपकलिकोपमं ॥ २७ ॥

अर्थ--यह स्वरोदय शास्त्र संपूर्ण उत्तम शास्त्रोंमेंभी श्रेष्ठ है आत्मरूपी घटको प्रकाश करनेंमें दीपककी कलिका अर्थात् लोयके समान है ॥ २७ ॥

यस्मैकस्मैपरस्मैवाप्रोक्तंचप्रश्नहेतवे ॥
तस्मादेतत्स्वयंज्ञेयमात्मनैवात्मनात्मनि ॥ २८ ॥

अर्थ--यह शास्त्र पूछनेंसेही जिस किसीकेवास्ते नही दे ना किंतु आपही अपनेंवास्ते अपनी बुद्धि करके अप शरीरम जानें ॥ २८ ॥

नतिथिर्नचनक्षत्रंनवारोग्रहदेवता ॥

नचविष्टिर्व्यतीपातवैधृताद्यास्तथैवच ॥ २९ ॥

अर्थ–तिथी नक्षत्र वार ग्रह देवता भद्रा व्यतीपात वैधृत इत्यादिक दोष इस स्वरोदय शास्त्रमें नहीहै ॥ २९ ॥

कुयोगोनास्तिहेदेविभवितावाकदाचन ॥
प्राप्तेस्वरबलेशुद्धेसर्वमेवशुभंफलम् ॥ ३० ॥

हे देवी इसमें कोई बुरा योगभी नही है और कभी बुरा योग होगाभी नहीं स्वरके शुद्ध बल प्राप्त होनेपर सबहि शुभ फल होते हैं ॥ ३० ॥

देहमध्येस्थितानाड्योबहुरूपाःसुविस्तरात् ॥
ज्ञातव्याश्चबुधैर्नित्यंस्वदेहज्ञानहेतवः ॥ ३१ ॥

अर्थ–देहके बीचमें बहुतसे रूपवाली नाडियां विस्तार पूर्वक स्थितहो रहीहैं वे सब पंडित जनोंनें अपने देहके ज्ञानकेवास्ते जाननी चाहिये ॥ ३१ ॥

नाभिस्थानकर्कंदोर्त्थंअंकुरादेवानिर्मिताः ॥
द्विसप्ततिसहस्राणिदेहमध्येव्यवस्थिताः ॥ ३२ ॥

अर्थ–नाभि स्थानमें स्थित हुए कंदके ऊपर अंकुर स्वरूपसे निकसी हुई बहत्तर ७२ नाडियां देहके मध्यमें व्यवस्थित हो रही हैं ॥ ३२ ॥

नाडिस्थाकुंडलीशक्तिर्भुजंगाकारशायिनी ॥
ततोदशोर्ध्वगानाड्योदशैवाधःप्रतिष्ठिताः ३३॥

अर्थ–नाडियोंमें स्थित हुई कुंडली शक्तिहै सो सर्पके आकार सोती हुई है तिससे ऊपरकी तर्फ गई हुई दशनाडी है और दशनाडी नीचेको गई हैं ॥ ३३ ॥

द्वेद्वेतिर्यग्गतेनाड्योचतुर्विंशातिसंख्यया ॥

प्रधानादशनाड्यस्तुदशवायुप्रवाहका: ॥ ३४ ॥

अर्थ–और दोदो नाडी तिरछी गई है ऐसे चौवीस नाडीय हैं तहां दशनाडी तो प्रधान है और दश वायुको वहानें वालीहै ॥ ३४ ॥

तिर्यगूर्ध्वमधस्थावावायुदेहसमन्विता: ॥
चक्रवत्संस्थितादेहेसर्वेप्राणसमाश्रिता: ॥ ३५ ॥

अर्थ–तिरछी ऊंची और नींची स्थित हुई नाडियां वायु और देहके आश्रित हैं देहमें चक्रकी तरह संयुक्त हैं तबही, प्राणोंके आश्रय है ॥ ३५ ॥

तासांमध्येदशश्रेष्ठादशानांतिस्रउत्तमा: ॥
इडाचपिंगलाचैवसुषुम्णाचतृतीयका ॥ ३६ ॥

अर्थ–तिन्होंके विषे दशनाडी श्रेष्ठ हैं उनमेंभी तीन नाडी उत्तम है इडा पिंगला तीसरी शुषुम्ना है ॥ ३६ ॥

गांधारीहस्तिनीजिव्हापूषाचैवयशस्विनी ॥
अलंबुषाकुहुश्चैवशंखिनीदशमीतथा ॥ ३७ ॥

अर्थ–और गांधारी हस्तिजिव्हा पूषा यशस्विनी अलंबुषा कुहु, दशवीं शंखिनी हैं ॥ ३७ ॥

इडावामेस्थिताभागेदक्षिणेपिंगलातथा ॥
सुषुम्णामध्यदेशेतुगांधारीवामचक्षुषि ॥ ३८ ॥

अर्थ–इडानाडी शरीरके वाम भागमें स्थितहै पिंगला दाहिने भागमें स्थितहै सुषुम्ना मध्यभागमें स्थितहै गांधारी बायें नेत्रमें स्थितहै ॥ ३८ ॥

दक्षिणेहस्तिजिव्हाचपूषाकर्णेचदक्षिणे ॥
यशस्विनीवामकर्णेआननेचाप्यलंबुषा ॥ ३९

अर्थ-दहिनें नेत्रमें हस्ति जिव्हा नाडी स्थित है पूषा कानमें स्थितहै अलंबुषा मुखमें स्थितहै ॥ ३९ ॥

कुहूश्चलिंगदेशेतुमूलस्थानेतुशंखिनी ॥
एवंद्वारंसमाश्रित्यतिष्ठंतिदशनाडिकाः ॥ ४० ॥

अर्थ-कुहूलिंग देशामें स्थितहै और शंखिनी गुदास्थानमें है ऐसे शरीरके द्वारोंके आश्रित हुई ये दशनाडीटिक रहीहैं ४०

इडापिंगलासुषुम्नाचप्राणमार्गेसमाश्रिताः ॥
एताहिदशनाडयस्तुदेहमध्येव्यवस्थिताः ॥४१॥

अर्थ-इडा पिंगला सुषुम्ना ये तीनों नाडी शरीरके मध्यमें स्थित हैं ॥ ४१ ॥

नामानिनाडिकानांतुवातानांतुवदाम्यहम् ॥
प्राणोऽपानःसमानश्चउदानोव्यानएवच ॥४२॥

अर्थ-नाडियोंकें नाम तो कह दिये अब नाडियोंके आश्रित हुई वायुओंके नामोंको कहते हैं प्राण अपान समान उदान व्यान ॥ ४२ ॥

नागःकूर्मोथकृकलोदेवदत्तोधनंजयः ॥ हृदिप्रा
णोवसेन्नित्यमपानोगुदमंडले ॥ ४३ ॥

अर्थ-और नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय, ये नामहै हृदयमें नित्य प्राण वसताहै आपानवायु, गुदामें रहताहै ॥ ४३ ॥

समानोनाभिदेशेतुउदानःकंठमध्यगः ॥
व्यानोध्यापीशरीरेषुप्रधानादशवायवः ॥ ४४ ॥

अर्थ-समान नाभिमें स्थितहै उदान कंठके मध्यमें

स्थितहै व्यान वायु संपूर्ण शरीरमें व्याप्त होके स्थित रहताहै ऐसे शरीरमें दशवायु प्रधानहै ॥ ४४ ॥

प्राणाद्याःपंचविख्यातानागाद्याःपंचवायवः ॥
तेषामपिचपंचानांस्थानानिचवदाम्यहम् ॥४५॥

प्राण आदि पांच वायुओंके स्थान कह दिये अब नाग आदि जो पांचवायु हैं तिनकेभी स्थानोंको कहतेहैं ॥ ४५ ।

उद्गारेनागआख्यातःकूर्मउन्मीलनेस्मृतः ॥
कृकलःक्षुतकृज्ज्ञेयोदेवदत्तोविजृंभणे ॥ ४६ ॥

अर्थ-नागवायु उद्गार, अडकार लेनेंमें है कूर्मवायु आंखिनके खोलनें मीचनेमें है कृकलवायु छींक लेनेंमें है देवदत्तवायु जंभाई लेनेंमें है ॥ ४६ ॥

नजहातिमृतंवापिसर्वव्यापीधनंजयः ॥
एतेनाडीषुसर्वासुभ्रमंतेजीवरूपिणः ॥ ४७ ॥

अर्थ-संपूर्ण शरीरमें व्याप्त होके रहनेंवाला धनंजय मृत शरीरमेंभी रहताहै जीवरूपी ये दशवायु संपूर्ण नाडियोंमें भ्रमते रहतेहैं ॥ ४७ ॥

प्रकटंप्राणसंचारंलक्षयेद्देहमध्यतः ॥ इडापिंग
लासुषुम्नाभिर्नाडीभिस्तिसृभिर्बुधः ॥ ४८ ॥

अर्थ-देहके मध्यमें प्रकट रूप प्राणका संच्यारहै उसको बुद्धिमान इडा पिंगला सुषुम्ना इन तीन नाडियों करके पहिचाने ॥ ४८ ॥

इडावामेचविज्ञेयपिंगलादक्षिणेस्मृता ॥
इडानाडीस्थितावामाततोव्यस्ताचपिंगला ४९॥

अर्थ-इडा शरीरके वामभागमें जाननी पिंगला दहिनें

भागमें जानती इडा नाडी वामावर्त्तसे स्थितहै पिंगला दक्षिणावर्त, दक्षिणस्वरू से स्थितहै ॥ ४९ ॥

इडायांतुस्थितश्चंद्रःपिंगलायांचभास्कर ॥
सुषुम्नाशंभुरूपेणशंभुर्हंसस्वरूपतः ॥ ५० ॥

अर्थ—इडामें चंद्रमा स्थितहै पिंगलामें सूर्य स्थितहै सुषुम्ना शिव स्वरूपसे स्थितहै शिवजी हंस स्वरूपसे स्थितहैं ॥५०॥

हकारोनिर्गमेप्रोक्तःसकारेणप्रवेशनम् ॥
हकारःशिवरूपेणसकारःशक्तिरुच्यते ॥ ५१ ॥

अर्थ—हकार स्वरके निकसनेंमें कहाहै सकार अंदर स्वर प्रवेश होनेंमें कहाहै. हकार शिवरूपहै सकार शक्ति रूप कहाताहै ॥ ५१ ॥

शक्तिरूपस्थितेचंद्रोवामनाडीप्रवाहकः ॥
दक्षनाडीप्रवाहश्चशंभुरूपोदिवाकरः ॥ ५२ ॥

अर्थ—वांईनाडीका प्रवाह करनेंवाला चंद्रमा शक्तिरूप करके स्थितहै दक्षिण नाडीका प्रवाह करनेंवाला सूर्य शीवरूपसे स्थितहै ॥ ५२ ॥

श्वासेसकारसंस्थेतुयद्दानंदीयतेबुधैः ॥ तद्दानं
जीवलोकेस्मिन्कोटिकोटिगुणंभवेत् ॥ ५३ ॥

अर्थ--सकारविषें स्थित हुये श्वासके समय जो बुद्धिमानोंसे दान दिया जाताहै वह दान इस जीवलोकमें कोटि कोटि अनंत गुना फल देताहै ॥ ५३ ॥

अनेनलक्षयेद्योगीचैकचित्तःसमाहितः ॥ सर्व
मेवविजानीयान्मार्गेवैचंद्रसूर्ययोः ॥ ५४ ॥

अर्थ–एकाग्र चित्तसे सावधान हुआ योगि इसही प्रका रसे देखै यह योगी सर्वको चंद्रमा और सूर्यकेही मार्गी जानें ॥ ५४ ॥

ध्यायेत्तत्वंस्थिरेजीवेअस्थिरेनकदाचन ॥
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्यमहालाभोजयस्तथा ॥ ५५ ॥

अर्थ–जोस्थिर जीव होनेंके समयही तत्त्वका ध्यान करै अस्थिर जीवके समय कर्म न करै तिसके वांछितकी सिद्धि होति है यह लाभ और जय होताहै ॥ ५५ ॥

चंद्रसूर्यसमभ्यासंयेकुर्वंतिसदानराः ॥ अती
तानागतज्ञानंतेषांहस्तगतंभवेत् ॥ ५६ ॥

अर्थ–जो मनुष्य चंद्रमा और सूर्यके स्वरोंका सदैव अच्छी तरंहसे अभ्यास करतेहैं उनकी भूत भविष्यत् वर्त्त मानको ज्ञान हस्तगत अर्थात् भले प्रकारसे होताहै ॥५६॥

वामेचामृतरूपास्याज्जगदाप्यायनंपरम् ॥
दक्षिणेचरभागेनजगदुत्पादयेत्सदा ॥ ५७ ॥

अर्थ–वामभागमें स्थित इडा नाडी अमृत स्वरूप है जगत्को पुष्ट करनेंवालीहै दक्षिण भागमें चर भागसें स्थित पिंगला सदा जगत्को उत्पन्न करतीहै ॥ ५७ ॥

मध्यमाभवतिक्रूरादुष्टासर्वत्रकर्मसु ॥ सर्वत्रशु
भकार्येषुवामाभवतिसिद्धिदा ॥ ५८ ॥

अर्थ–मध्यमें रहनेंवाली सुषुम्नानाडी क्रूरहै सब शुभक र्मोंमें सिद्धिको देनेंवालीहै ॥ ५८ ॥

निर्गमेतुशुभावामाप्रवेशेदक्षिणाशुभा ॥
चंद्रसमस्तुविज्ञेयोरविस्तुविषमःसदा ॥ ५९ ॥

अर्थ-घरके निकसनके समय वांयींनाडी अच्छीहै और प्रवेशके समय दहिनीनाडी शुभहै चंद्रमा सम कहा-ताहै, सूर्य विषम कहाताहै ॥ ५९ ॥

चंद्रःस्त्रीपुरुषःसूर्यश्चंद्रोगौरोसितोरविः ॥
चंद्रनाडीप्रवाहेनसौम्यकार्याणिकारयेत् ॥ ६० ॥

अर्थ--चंद्रमा गौर और सूर्य श्यामवर्ण जानना चंद्र-माकी नाडीके प्रवाहमें सौम्य कार्योंको करै ॥ ६० ॥

सूर्यनाडीप्रवाहेणरौद्रकर्माणिकारयेत् ॥ सुषु
म्नायाःप्रवाहेणभुक्तिमुक्तिफलानिच ॥ ६१ ॥

अर्थ-सूर्यकी नाडीके प्रवाहमें क्रूरकर्म करना सुषुम्नाके प्रवाहमें भक्ति और मुक्तिको देनेवाले कर्मोंको करै ॥ ६१ ॥

आदौचंद्रःसितेपक्षेभास्करस्तुसितेतरे ॥
प्रतिपत्तोदिनान्याहुस्त्रीणित्रीणिक्रमोदयः॥६२॥

अर्थ-शुक्लपक्षमें पहले तीन दिनतक चंद्रमा और कृष्ण पक्षमें प्रतिपदाआदि तीनदिन सूर्यका स्वर चलताहै यह क्रमसे उदय जानना ॥ ६२ ॥

सार्धद्विघटिकेज्ञेयःशुक्लेकृष्णेशशीरविः ॥ वह
त्येकदिनेनैवयथाषष्टिघटिक्रमात् ॥ ६३ ॥

अर्थ-शुक्लपक्षमें ढाई २॥ घटी चंद्रमा और कृष्णपक्षमें ढाई २॥ घटी पहले दिनके उदयमें सूर्यका स्वर चलता है ऐसे क्रमसे एकही दिनकी साठ ६० घडियों वहतेहैं॥ ६३ ॥

वहेयुस्तद्धटीमध्येपंचतत्वानिनिर्दिशेत् ॥
प्रतिपत्तोदिनान्याहुविपरीतेविपर्ययः ॥ ६४ ॥

अर्थ-और तिस एक २ की घडियोंके मध्य पांचोंतत्त्व

वहतेहै ऐसा जानना और प्रतिपदासे जो तीन २ दिन कहेहैं उनमें जो विपरीत अर्थात् सूर्यके दिनोंमें चंद्रमा और चंद्रमाके दिनोंमे सूर्य होवे तो शुभकार्यमें वर्ज देवे ॥ ६४॥

शुक्लपक्षेभवेद्वामाकृष्णपक्षेचदक्षिणा ॥ जानी यात्प्रतिपत्पूर्वंयोगीतद्यतमानसः ॥ ६५ ॥

अर्थ–शुक्लपक्षमें पहले प्रतिपदासे लेके बायींनाडी और कृष्णपक्षमें पहले दहीनि नाडीको योगिजन एकाग्र चित्तसे जानें ॥ ६५ ॥

शशांकंवारयेद्रात्रौदिवावार्योदिवाकरः ॥ इत्य भ्यासरतोनित्यंसयोगीनात्रसंशयः ॥ ६६ ॥

अर्थ–रात्रीमें चंद्रमाके निवारण करै और दिनमें सूर्यके स्वरको निवारण करै ऐसे अभ्यासमें प्रयुक्त रहनें वाला योगी उत्तम योगी है इसमें संदेह नहीं ॥ ६६ ॥

सूर्येणबध्यतेसूर्यश्चंद्रश्चंद्रेणबध्यते ॥ योजा नातिक्रियामेतांत्रैलोक्यंवशयेतक्षणात्॥ ६७ ।

अर्थ–सूर्यका स्वरकरके सूर्य बंद होताहै और चंद्रमाके स्वरकरके चंद्रमाका स्वर बंद होताहै ऐसी इस क्रियाको जो जानताहै उसके वशमें त्रिलोकी क्षणमात्रमेंहै ॥ ६७ ॥

गुरुशुक्रबुधेंदूनांवासरेवामनाडिका ॥ सिद्धिदासर्वकार्येषुशुक्लपक्षेविशेषतः ॥ ६८ ॥

अर्थ–बृहस्पती शुक्र बुध सोम इन वारोंमें जब बायीं नाडी चलीहो तब कियेहुए संपूर्ण काम सिद्ध होंतेहैं और जो शुक्ल पक्षमें ऐसाही हो तो, अधिक शुभहै ॥ ६८ ॥

अर्कांगारकसौरीणांवासरेदक्षनाडिका ॥

स्मर्त्तव्याचरकार्येषुकृष्णपक्षेविशेषतः ॥ ६९ ॥

अर्थ–सूर्य मंगल शनि इन वारोंमें चलतीहुई दहिनीनाडी शुभहै और चरकार्योंमें तथा कृष्णपक्षमें अति शुभदायी है ६९

प्रथमंवहतेवायुर्द्वितीयंचतथानलः ॥ तृतीयंबह तेभूमिश्चतुर्थंवारुणंवहेत् ॥ ७० ॥

अर्थ– प्रथम वायुतत्त्व वहताहै. दूसरा अग्नितत्त्व और तीसरे पृथ्वीतत्त्व वहताहै चौथे जलतत्त्व वहताहै ॥ ७० ॥

सार्धद्विघटिकेपंचक्रमेणैवोदयंतिच ॥ क्रमा देकैकनाड्यातुतत्वानांपृथगुद्भवः ॥ ७१ ॥

अर्थ–एक स्वरकी ढाई घटीमें ये पांचोंतत्त्व इस; क्रमसे प्रकट होतेहैं क्रमसे एक २ नाडीविषें क्रमसे पांचोंतत्त्व उत्पन्न होतेहैं ॥ ७१ ॥

अहोरात्रस्यमध्येतुज्ञेयाद्वादशसंक्रमाः ॥ वृषक र्कटकन्यालिमृगमीनानिशाकरे ॥ ७२ ॥

अर्थ–दिन रातिमें बारह संक्रांति जाननी तहां वृष कर्क कन्या वृश्चिक मकर मीन ये चंद्रमाकी राशि है ॥ ७२ ॥

मेषसिंहौचकुंभश्चतुलाचमिथुनंधनम् ॥ उदये दक्षिणेज्ञेयःशुभाशुभविनिर्णयः ॥ ७३ ॥

अर्थ–मेष सिंह कुंभ तुला मिथुन धन ये दहिनें स्वरके उदयमेंहै ऐसे वस्तुका, शुभाशुभ निर्णय करना ॥ ७३ ॥

तिष्ठेत्पूर्वोत्तरेचन्द्रोभानुःपश्चिमदक्षिणे ॥ दक्षना ड्याःप्रसारेतुनगच्छेद्याम्यपश्चिमौ ॥ ७४ ॥

अर्थ–पूर्व और उत्तर दिशामें चंद्रमा ठरताहै पश्चिम और

दक्षिण दिशामें सूर्य ठहरताहै. दहिनीनाडी चलतीहो तब दक्षिण ओर पश्चिम दिशामें गमन नकरै ॥ ७४ ॥

वामाचारप्रवाहेतुनगच्छेत्पूर्वउत्तरे ॥ परिपंथिभयंतस्यगतोऽसौननिवर्त्तते ॥ ७५ ॥

अर्थ—बांयींनाडी चलतीहो तब पूर्व उत्तर दिशामें न जावे जानेंवालेको चोर शत्रु आदिकोंका भय होताहै तहां गया फिर उलटा नहीं आसकता ॥ ७५ ॥

तस्मात्तत्रनगन्तव्यंबुधैःसर्वहितैषिभिः ॥ तदातत्रतुसंयातेमृत्युरेवनसंशयः ॥ ७६ ॥

अर्थ—इसलिये सर्वके हितकी इच्छावाले बुद्धिमान् जनोंनें तिस समय नहीं जाना उस समय जो तिन दिशाओंमें जानेंसें मृत्युही होतीहै इसमें संदेहनहीं ॥ ७६ ॥

शुक्लपक्षेद्वितीयायामर्केवहतिचंद्रमाः ॥ दृश्यतेलाभदःपुंसांसौम्येसौख्यंप्रजायते ॥ ७७ ॥

अर्थ—शुक्लपक्षकी द्वितीयाको सूर्यके स्वरके समय, चंद्रमाका स्वर वहे तो पुरुषोंको सुख होताहै तिस समय सौम्य कार्य करनेंमें सुख होताहै ॥ ७७ ॥

सूर्योदयेयदासूर्यश्चंद्रश्चंद्रोदयेभवेत् ॥ सिद्ध्यंतिसर्वकार्याणिदिवारात्रिगतांन्यपि ॥ ७८ ॥

अर्थ—सूर्योदयमें सूर्यका स्वर चलताहो और चंद्रमाके उदयमें चंद्रमाका स्वर चलताहै उस दिनके तथा रात्रीके किये, सब कार्य सिद्ध होतेहैं ॥ ७८ ॥

चंद्रकालेयदासूर्यःसूर्यचंद्रोदयेभवेत् ॥ उद्वेगःकलहोहानिःशुभंसर्वंनिवारयेत् ॥ ७९ ॥

अर्थ—चंद्रमाके उदयमें सूर्यका स्वर चलताहै सूर्यके उदयमें चंद्रमाका स्वर चलताहो तो उद्वेग कलह तथा हानि होतीहै तहां शुभकर्म नकरै ॥ ७९ ॥

सूर्यस्यवाहेप्रवदंतिविज्ञाज्ञानंह्यगम्यस्यतुनिश्चयेन ॥ श्वासेनयुक्तस्यतुशीतरश्मेःप्रवाहकालेफलमन्यथास्यात् ॥ ८० ॥

अर्थ—सूर्यका स्वर चालताहो तब अगम्य अर्थात् जो नहीं प्राप्तहोसक्तीहो तिस वस्तुका निश्चय ज्ञान होताहै और चंद्रमाके स्वरसे युक्त पुरुषको यह ज्ञान नहींहो सक्ता ॥ ८० ॥

यदाप्रत्यूषकालेनविपरीतोदयोभवेत् ॥ चंद्रस्थानेवहत्यर्कोरविस्थानेचचंद्रमाः ॥ ८१ ॥

अर्थ—अब विपरीत स्वरके लक्षण कहतेहैं जो यदि च्यारघटीके तडकै प्रातःकालसे लेके स्वरोंका विपरीत उदय होवे चंद्रमाके स्थानमें सूर्यका स्वरहो और सूर्यके स्थानमें चंद्रमाहो तो यह फलहै कि. ॥ ८१ ॥

प्रथमेमनसोद्वेगंधनहानिर्द्वितीयके ॥
तृतीयेगमनंप्रोक्तंइष्टनाशचतुर्थके ॥ ८२ ॥

अर्थ—पहले समयमें मनका उद्वेग दुसरे समय धनकी हानि तीसरे समयमें कहीं गमन होवे चौथे समयमें विपरीत स्वर होवे तो इष्टवस्तुका नाश होताहै ॥ ८२ ॥

[illegible]चमेराजविध्वंसंषष्ठेसर्वार्थनाशनम् ॥ सप्तमे[illegible]ाधिदुःखानिअष्टमेमृत्युमादिशेत् ॥ ८३ ॥

[illegible]र्थ—पांचवे वार राज्यका विध्वंस छठे वार संपूर्ण

द्रव्यका नाश सातवेंमें बीमारीके दुःखका आना आठवेंमें मृत्यु होतीहै ॥ ८३ ॥

कालत्रयेदिनान्यष्टौविपरीतंयदावहेत् ॥
तदादुष्टफलंप्रोक्तंकिंचिन्न्यूनेतुशोभनम् ॥ ८४ ॥

अर्थ–आठ दिनतक जो तीनों कालोमें विपरीत स्वर चलता रहे तो अशुभ फल होताहै और कछु थोडे दिनतक होवे तो शुभफल होताहै ॥ ८४ ॥

प्रातर्मध्यान्हयोश्चंद्रःसायंकालेदिवाकरः ॥
तदानित्यंजयोलाभोविपरीतेतुदुःखदम् ॥ ८५ ॥

अर्थ–प्रातःकाल तथा मध्यान्हमें चंद्रमाका स्वर होवे और सायंकालमें सूर्यका स्वर होवे तो नित्य जयलाभ होताहै इससे विपरीत होनेंमें दुःख होताहै ॥ ८५ ॥

वामेवादक्षिणेवापियत्रसंक्रमतेशिवः ॥ कृत्वात
त्पादमादौचयात्राभवतिसिद्धिदा ॥ ८६ ॥

अर्थ–वामा अथवा दहिना कोईसा स्वर चलता होवे तब उसही पैरको आगे रखके गमन करे तो वह यात्रा सिद्धीको देनेंवाली होतीहै ॥ ८६ ॥

चंद्रःसमपदःकार्योरविस्तुविषमःसदा ॥
पूर्णपादपुरस्कृत्ययात्राभवतिसिद्धिदा ॥ ८७ ॥

अर्थ–चंद्रमाकेस्वरमें २–४–६–आदि सम पैर आगे रक्खे और सूर्यके स्वरमें १–३–५–आदि विषम पैर आगे रक्खे ऐसे यथोक्त पूर्णपैर आगे रखके चलनेंसे यात्रा द्धिको देनेंवाली होतीहै ॥ ८७ ॥

चंद्रचारेचतुष्पादेपंचपादस्तुभास्करे ॥
एवंचगमनंश्रेष्ठंसाधयेद्भुवनत्रयं ॥ ८८ ॥

अर्थ--चंद्रमाका स्वर चलताहो तब बायें४पैर आगे रखकर और सूर्यका स्वर चलते समय दहिनें, पांच पैर आगे रख के जो गमन किया जाताहै वह त्रिलोकीको साधताहै॥८८॥

यत्रांगेवहतेवायुस्तदंगस्यकरस्तलं ॥
सुप्तोत्थितोमुखंस्पृष्ट्वालभतेवांछितंफलं ॥ ८९ ॥

अर्थ-सोके उठनेंके समय जो नासा स्वर चलताहो उसी अंगके हाथकी हथोलीसे मुखको स्पर्श करके खडा होवे तो मनोवांछित फल मिले ॥ ८९ ॥

परदत्तेतथाग्राह्येगृहान्निर्गमनेपिच ॥
यदंगेवहतेनाडीग्राह्यंतेनकरांघ्रिणा ॥ ९० ॥

अर्थ-अन्यको दान देनेंमें तथा अन्यसे [कछु] ग्रहण करनेंमें घरसे गमन करनेंमें जिस अंगका स्वर चलताहै उसी हाथ पैरसे करना ॥ ९० ॥

नहानिःकलहोनैवकंटकैर्नापिभिद्यते ॥
निवर्ततेसुखेनैवसर्वोपद्रववर्जितः ॥ ९१ ॥

अर्थ- ऐसे करनेंवालेके हानि कलह नहीं होतेहै और (कंटक) शत्रुवोंकरके छेदन नहीं होताहै निरंतर सुखसे रहता है संपूर्ण उपद्रवोंसे रहित रहताहै ॥ ९१ ॥

गुरुबंधुनृपामात्याअन्येपिशुभदायिनः ॥
पूर्णांगेखलुकर्तव्याःकार्यसिद्धिमभीप्सिताः ९२

अर्थ- गुरु बंधुजन राजा मंत्री, ये तथा शुभदायी जन इन सबोंके पूर्ण अंगमें करै अर्थात् जो नासा स्वर पूर्ण चलताहो उसीतर्फ करे ॥ ९२ ॥

अरिचौराधमर्णाद्याअन्येषांचैवनिग्रहाः ॥
कर्त्तव्याःखलुरिक्तायांजयलाभसुखार्थिभिः ॥९३

अर्थ–शत्रु चोर कर्जामांगनेंवाला इनका तथा अन्य दुष्टो का निग्रह करना होवे तो इनको जो खाली खाली नाडी होवे उसहीतर्फ करै जय लाभ सुख तनकी इच्छावाले जननें ऐसेही करना ॥ ९३ ॥

दूरदेशेविधातव्यंगमनंतुहिमद्युतौ ॥
अभ्यर्णदेशेतुदीप्तेतरणावितिकेचन ॥ ९४ ॥

अर्थ–दूरदेशमें जाना होवे तो चंद्रमाके स्वरमें गमनकरै और समीपदेशमें जाना होवे तो सूर्यके स्वरमें गमन करै ऐसे कितेक जन कहतेंहै ॥ ९४ ॥

यत्किंचित्पूर्वमुद्दिष्टंलाभादेश्चसमागमः ॥
तत्सर्वंपूर्णनाडीषुजायतेनिर्विकल्पकं ॥ ९५ ॥

अर्थ–पहले जो [कछु] लाभ आदिका समागम कहा है वह संपूर्ण पूर्णस्वरके चलनेंमें निंःसंदेह होताहै ॥ ९५ ॥

शून्यनाड्यांविपर्यस्तंयत्पूर्वंप्रतिपादितं ॥
जायतेनान्यथाचैवयथासर्वज्ञभाषितं ॥ ९६ ॥

अर्थ–और जो कछु पहले कहाहै वह लाभादिक खाली नाडी चलनेंमें विपरीत फल देताहै यह शिवजीका कहाहुआवचनहै सो अन्यथा नहींहोताहै ॥ ९६ ॥

व्यवहारेखलोच्चाटेद्वेषिविद्यादिवंचकः ॥
कुपितस्वामिचौराद्याःपूर्णस्थास्युर्भयंकराः ९७॥

अर्थ–व्यवहार दुष्टपुरुषका उच्चाटन शत्रु किसी विद्यासे ठग नेंवाला क्रोधहुआ स्वामी चोर ये सब पूर्णस्वर चलताहै तो भय करनेंवालेहैं ॥ ९७ ॥

दूराध्वनिशुभश्चंद्रोनिर्विघ्नोनष्टसिद्धिदाः ॥
प्रवेशकार्यहेतौचसूर्यनाडिप्रशस्यते ॥ ९८ ॥

अर्थ-दूर मार्गमें जानेंविषें चंद्रमाका स्वर शुभ मनोवांछित फलकी सिद्धि करताहै और प्रवेशके कार्योंमें सूर्यकी नाडी शुभ कहीहै ॥ ९८ ॥

चंद्रचारेविषंहंतिसूर्येबालावशंनयेत् ॥
सुषुम्णायांभवेन्मोक्षएकदेवत्रिधास्थितः ॥९९॥

अर्थ-चंद्रमाका स्वर चलनेंके समय विषको दूरकर देवै और सूर्यका स्वर चलनेंमें स्त्रीको वशमें करै सुषुम्नामें मोक्ष होताहै ऐसे ए स्वर तीन प्रकारसें स्थितहै ॥ ९९ ॥

अयोग्येयोग्यतानाड्यायोग्येस्थानेप्ययोग्यता ॥
कार्यानुबंधनोजीवःयथारुद्रस्तथाचरेत् ॥ १०० ॥

अर्थ-अयोग्य कार्यमें नाडीकी योग्यताहो और योग्य कार्यमें अयोग्यता हो तो उस कार्यमें यह पुरुष बंध जाताहै इसलिये जैसा स्वर चले वैसाही आचरण करना ॥ १०० ॥

शुभान्यशुभकार्याणिक्रियंतेहर्निशंयदा ॥
तदाकार्यनिरोधेनकार्यंनाडीप्रचालनं ॥ १०१ ॥

अर्थ-रातिमें तथा दिनमें जैसा शुभ अशुभ कर्म किया जावे तब उस कार्यके अनुसारही नाडीका संच्यार करना योग्यहै ॥ १०१ ॥

प्रथमइडानाडीस्थिरकर्मण्यलंकारेदूराध्वगमनेत
था ॥ आश्रमेहर्म्यप्रासादेवस्तुनांसंग्रहेपिच१०२

अर्थ-अब इडानाडीके कार्योंको कहतेहै. स्थिरकर्म आभूषण विवाह दूर मार्गमें जाना आश्रम हवेली मंदिर इनका कार्य तथा वस्तुओंका संग्रहमें ॥ १०२ ॥

वापीकूपतडागादिप्रतिष्ठास्तंभदेवयोः ॥
यात्रादानेविवाहेचवस्त्रालंकारभूषणे ॥ १०३ ॥

अर्थ-बावडी कूप तलाव आदि तथा देवता और स्तंभ आदिकी प्रतिष्ठामें विवाहविषें वस्त्र अलंकार आदिसे भूषित होनेंमें ॥ १०३ ॥

शांतिकेपौष्टिकंचैवदिव्योषधिरसायने ॥
स्वस्वामिदर्शनेमैत्रेवाणिज्येकणसंग्रहे ॥ १०४ ॥

अर्थ-शांतिके कर्म तथा पुष्टिके कर्मोंमें दिव्य औषधी, रसायनमें अपनें स्वामीके दर्शनमें मित्रतामें वणिजमें धान्य राशि करनेंमें ॥ १०४ ॥

गृहप्रवेशेसेवायांकृष्यांवैबीजवापने ॥
शुभकर्मणिसंधौचनिर्गमेचशुभंशशी ॥ १०५॥

अर्थ-गृह प्रवेशमें सेवामें खेतीमें बीज बोवनेंमें अन्य शुभकर्ममें मिलाप करनेंमें चंद्रमाका स्वर, इडानाडी शुभहै१०५

विद्यारंभादिकार्येषुबान्धवानांचदर्शने ॥
जनमोक्षेचधर्मेचदीक्षायामंत्रसाधने ॥ १०६ ॥

अर्थ-विद्याका आरंभ बंधुजनोंका दर्शन मनुष्यका छुटना धर्मदीक्षा मंत्रसाधन ॥ १०६ ॥

कालविज्ञोनसूत्रेतुचतुःपदग्रहागमे ॥ कालव्याधिचिकित्सायांस्वामिसंबोधनेतथा ॥ १०७ ॥

अर्थ-कालका ज्ञान सूत्र, चौपाये पशुओंको घरमेंलाना कालकी व्याधिकी चिकित्सा, स्वामीका बुलाना इन सब कार्योंमेंभी इडानाडी शुभ कहीहै ॥ १०७ ॥

गजाश्वारोहणेधन्विगजाश्वानांचबंधने ॥
परोपकरणेचैवनिधीनांस्थापनेतथा ॥ १०८ ॥

अर्थ-हाथी तथा घोडेकी सवारीमें धनुषविद्या हाथी

और अश्वोंके बांधनेंमें किसीके उपकार करनेंमें द्रव्यादि खजानाके स्थापन करनेंमें ॥ १०८ ॥

गीतवाद्यादिनृत्यादौगीतशास्त्रविचारणे ॥
पुरग्रामनिवेशेचतिलकक्षेत्रधारणे ॥ १०९ ॥

अर्थ-गीत बाजा नृत्य आदिकोंमें गीत शास्त्रके विचारनेंमें पुर ग्रामादिकोंमें प्रवेश समय राज्याभिषेकमें ॥१०९॥

आर्तिशोकविषादेचज्वरितेमूर्छितेऽपिवा ॥
स्वजनस्वामिसम्बन्धेधान्यादिदारुसंग्रहे ॥११०॥

अर्थ-पीडा शोक, विषाद ज्वर मूर्च्छा स्वजन तथा स्वामी आदिकोंसें मिलना धान्य वा काष्ठआदिका संग्रह इन सबोंमें ॥ ११० ॥

स्त्रीणांदंतादिभूषायांवृष्टेरागमनेतथा ॥
गुरुपूजाविषादीनांचालनेचवरानने ॥१११ ॥
इडाचसिद्धिदाप्रोक्तायोगाभ्यासादिकर्मसु ॥
तत्रापिवर्जयेद्वायुंतेजआकाशमेवच ॥ ११२ ॥

अर्थ-और स्त्रियोंको दंत आदिका भूषण वर्षाका आना गुरुकी पूजा विष आदिका उतारना. हे वरानने इस सबोंमें इडानाडी सिद्धिको देनेंवाली कहीहै और योगाभ्यास आदिकोंमेंभी सिद्धि दायिनीहै तहां इडानाडीमेंभी वायुतत्त्व और आकाशतत्त्वको वर्जि देवै ॥ १११ ॥ ११२ ॥

सर्वकार्याणिसिध्यंतिदिवारात्रिगतान्यपि ॥ सर्वेषुशुभकार्येषुचंद्रवारःप्रशस्यते ॥ ११३ ॥

अर्थ-दिन रात्रीमें प्राप्तभये सब काम सिद्ध होतेहैं संपूर्ण शुभ कार्योंमें चंद्रमाका स्वर शुभ कहाहै ॥ ११३ ॥

पिंगलाकठिनक्रूरविद्यानांपठनेतथा ॥
स्त्रीसंगवेश्यागमनेमहानौकादिरोहणे ॥ ११४ ॥

अर्थ—अब पिंगलाके कार्योंको कहतेहैं. कठिन और क्रूर मरणोच्चाटनआदि विद्याओंमें स्त्रीसंग तथा वेश्यागमनमें महा नौका अर्थात् जिहाजआदिपै चढनेमें पिंगला नाडी शुभ कहीहै ॥ ११४ ॥

भ्रष्टकार्येसुरापानेवीरमंत्राद्युपासने ॥
विव्हलोध्वंसदेशादिविषदानेचवैरिणां ॥ ११५ ॥

अर्थ—भ्रष्टकार्य मदिरापान, वीर मंत्रआदिकी उपासना विव्हलपना देशका विध्वंस वैरियोंको विषदेना ॥ ११५ ॥

शास्त्राभ्यासेचगमनेमृगयापशुविक्रये ॥
इष्टिकाकाष्ठपाषाणेरत्नघर्षणदारणे ॥ ११६ ॥

अर्थ—शास्त्रका अभ्यास गमन सिकार खेलनें जाना पशुओंका वेचना ईट काष्ठ पत्थर रत्न इनका घिसना तथा फोडना ॥ ११६ ॥

गत्याभ्यासेयंत्रतंत्रेदुर्गेपर्वतरोहणे ॥
द्यूतेचौर्येगजाश्वादिरथसाधनवाहने ॥ ११७ ॥

अर्थ—गतिका अभ्यास यंत्र तंत्र किला तथा पर्वत आदिपै चढना जुआ, चोरी हाथी घोडा रथ इन वाहनोंका साधन करना ॥ ११७ ॥

खरोष्ट्रमहिषादीनांगजाश्वारोहणेतथा ॥
नदीजलौघतरणेभेषजेलिपिलेखने ॥ ११८ ॥

अर्थ—गधा ऊंट भैंसाआदि तथा हाथी घोडा आदिपै चढना नदी जलके समूहको तिरना औषधलेना लिपिका लिखना. ॥ ११८ ॥

मारणेमोहनेस्तंभेविद्धेषोच्चाटनेवशे ॥
प्रेरणाकर्षणेक्षोभेदानेचक्रयविक्रये ॥ ११९ ॥

अर्थ–मारण मोहन स्तंभन विद्वेषण उच्चाटन, वशीकरण, प्रेरणा आकर्षन क्रोध दान खरीदना ॥ ११९ ॥

खड्गहस्तेवैरियुद्धेभोगेवाराजदर्शने ॥
भोज्येस्नानेव्यवहारेक्रूरेदीप्तरविःशुभः ॥ १२० ॥

अर्थ–हाथमें तलवार लेना वैरीकेसंग युद्ध करना भोग और राजाका दर्शन भोजन करना स्नान करना क्रूर व्यवहार करना इन सब कार्योंमें सूर्यका स्वर चलना शुभहै१२०

भुक्तमात्रेणमंदाग्नौस्त्रीणांवश्यादिकर्माणि ॥
शयनंसूर्यवाहेनकर्तव्यंसर्वदाबुधैः ॥ १२१ ॥

अर्थ–भोजन करनेसें मंद अग्नीविषे प्रदीप्त अग्निकरनेंमें स्त्री वशिकरणमें पिंगलानाडी शुभहे इसलिये, बुद्धिमान् जनोंनें यह संपूर्ण कार्य सूर्यके स्वरमें करना ॥ १२१ ॥

क्रूराणिसर्वकर्माणिचराणिविविधानिच ॥
तानिसिध्यंतिसूर्येणनात्रकार्याविचारणा ॥ १२२

अर्थ–अनेक प्रकारके जो क्रूरकर्म हैं और जो अनेक चरकर्महै वे संपूर्ण सूर्यके स्वरमें सिद्ध होतेहै इसमें कछु विचार नहीं करना ॥ १२२ ॥

॥ अथसुषुम्णालक्षणम् ॥

वामेक्षणंक्षणंदक्षेयदावहतिमारुतः ॥
सुषुम्णासाचविज्ञेयासर्वकार्यहरास्मृता ॥ १२३ ॥

अर्थ–अब सुषुम्णाके लक्षण कहतेहैं. जब क्षणमात्रमें बायां और क्षणमात्रमें दहिना स्वर वहै तब वह सुषुम्णा

नाडी जाननी यह सब कार्यको हरनेंवाली कही है ॥१२३॥

तस्यांनाड्यांस्थितोवन्हिज्वलंतंकालरूपतः ॥
विषवत्तंविजानीयात्सर्वकार्यविनाशनं ॥ १२४ ॥

अर्थ–तिस नाडीमें स्थित हुआ अग्नितत्त्व कालरूपसे ज्वलित रहताहै उसको संपूर्ण कार्योंका नाशक विषवाला अग्नि जानना ॥ १२४ ॥

यदानुक्रममुल्लंघ्ययस्यनाडिद्वयंवहेत् ॥
तदातस्यविजानीयादशुभंनात्रसंशयः ॥ १२५ ॥

अर्थ–जब जिस पुरुषकी दोनों नाडी अपनें २ यथाक्रमको उलंघके वहतीहैं तब उसको अशुभ फल जानों इसमें कछु संशय नहीं ॥ १२५ ॥

क्षणंवामेक्षयंवायुर्विषमंभावमादिशेत् ॥
विपरीतफलंज्ञेयंज्ञातव्यंचवरानने ॥ १२६ ॥

अर्थ–जो यदि वायु क्षणमात्रही बायें स्वरमें वहके नष्ट होजावे यह विषमभाव कहताहै हेवराननें, तहां विपरीत फल जानना ॥ १२६ ॥

उभयोरेवसंचारंविषुवंतंविदुर्बुधाः ॥
नकुर्यात्क्रूरसौम्यानितत्सर्वंनिष्फलंभवेत् ॥१२७॥

अर्थ–बुद्धिमान् जन दोनों नाडियोंके एकवार संचारको विषवान् कहतेहैं तहां क्रूर तथा सौम्य किये हुए सब कर्म निष्फल होतेहैं ॥ १२७ ॥

जीवतेमरणेप्रश्नेलाभालाभौजयाजयौ ॥
विषमेविपरीतेवासंस्मरेज्जगदीश्वरं ॥ १२८ ॥

अर्थ–जीवना मरना प्रश्न लाभ हानि जय हार विषम

तथा विपरीत स्वर इन सबौंमें ईश्वरका स्मरण करना चाहिये ॥ १२८ ॥

ईश्वरेचिंततेकार्येयोगाभ्यासादिकर्मसु ॥
अन्यत्रतुनकर्तव्यंजयलाभसुखेप्सुभिः ॥ १२९ ॥

अर्थ-योगाभ्यासादि कर्योंमें ईश्वरविषें कार्य चिंतवन किये पीछे तहां जय लाभ सुखकी इच्छावाले जनोंको अन्य कछु कर्त्तव्य नहींहै ॥ १२९ ॥

सूर्येणवहमानायांसुषुम्णायांमुहुर्मुहुः ॥
शापंदद्याद्वरंदद्यात्सर्वथाचरदन्यथा ॥ १३० ॥

अर्थ-सूर्य करके जब वारंवार सुषुम्णानाडी वहती होय तब शापदो अथवा वरदो वह सब विपरीत होताहै ॥ १३० ॥

नाडिसंक्रमणेकालेतत्वसंक्रमणेतथा ॥
शुभंकिंचिन्नकर्तव्यंपुण्यदानादिकंशुभम् ॥ १३१

अर्थ-नाडियोंके संचलन परस्पर मेलमें और तत्त्वोंके संचलनमें, कच्छु शुभकर्म न करै और पुण्य दानआदि कभी न करना ॥ १३१ ॥

विषमस्योदयेयत्रमनसापिनचिंतयेत् ॥
यात्राहानिकरीतस्यमृत्युःक्लेशोनसंशयः ॥ १३२ ॥

अर्थ-विषम स्वर चलताहो तब किसी कार्यको मनसेभी चिंतवन नकरै तिस पुरुषको यात्रा हानी करनेंवाली होतीहै मृत्यु अथवा क्लेश होताहै इसमे संदेह नहीं ॥ १३२ ॥

पुरोवामोर्द्धतश्चंद्रोदक्षाधःपृष्टितोरविः ॥
पूर्णरिक्तविवेकोयंज्ञातव्योदैशिकैःसदा ॥ १३३ ॥

अर्थ-चंद्रमाके स्वरका वेग तो सन्मुख वा बायेंतर्फ तथा

ऊपरको होवे और सूर्यके स्वरका प्रहर पिछेको वा दहिनी तर्फ वा नीचेको होवे तो यह पूर्ण विवेक है इस्से विपरीत प्रवाहमें पंडितजनोंने सदैव रिक्त, खाली जानना ॥ १३३ ॥

ऊर्ध्ववामाग्रतोदूतोज्ञेयोवामपथिस्थितः
पृष्ठेदक्षेतथाधस्थःसूर्यवाहागतःशुभः ॥ १३४ ॥

अर्थ–चंद्रमाके स्वर चलते समय ऊपरकी तर्फ वा बायीं तर्फ तथा आगेको बैठाहुआ दूत शुभहै सूर्यके स्वर चलते समय पीठ पीछे दहिनें वा नींचेको बैठाहुआ दूत शुभहै ॥ १३४ ॥

अनादिर्विषमःसंधिर्निराहारोनिराकुलम् ॥
परेसूक्ष्मेविलीयेतसासंध्यासद्भिरुच्यते ॥ १३५ ॥

॥ इतिनाडिभेदः ॥

अर्थ–अनादि विषम संधिजो सुषुम्णानाडी है सो निराहार निराकुल हुई सूक्ष्मकस्त्वविषे लीनहोजावे तब सज्जनोंनें वह संध्यासमय कही है ॥ १३५ ॥ यहां नाडी भेद समाप्त.

॥ देव्युवाच "देवदेवमहादेवसर्वसंसारतारक ॥
स्थितंत्वदीयेहृदयेरहस्यंवदमेप्रभो ॥ १३६ ॥

अर्थ–पार्वती देवी पूछती भई. हे देवदेव महादेव हे संसारतारक आपके हृदयमें जो रहस्य वस्तु है उसको मेरे आगे कहो ॥ १३६ ॥

॥ ईश्वरउवाच ॥ स्वरज्ञानरतोयोगीसयोगीपरमो
मतः॥पंचतत्वाद्भवेत्सृष्टिस्तत्वेतत्वंविलीयते १३७

अर्थ–शिवजी कहनें लगे. हे देवी जो स्वरके ज्ञानमें रत योगीहै वही योगी श्रेष्ठहै सृष्टी पंचतत्वोंसेही तत्त्वमेंही तत्त्व लीन हो जातेहै ॥ १३७ ॥

तत्वानानामविज्ञेयंसिद्धियोगेनयोगिनां ॥
भूतानांदुष्टचिन्हानिजानंतिचस्वरोत्तमः॥१३८॥

अर्थ–इसलिये, योगीजनोंनें सिद्धयोग करके तत्त्वोंका नाम जानना योग्यहै उत्तम स्वर ज्ञानी पुरुष भूतोंके दुष्ट चिन्होंको जानताहै ॥ १३८ ॥

पृथिव्यापस्तथातेजोवायुराकाशमेवच ॥
पंचभूतात्मकंसर्वंयोजानातिसपूजितः ॥१३९॥

अर्थ–पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश ऐसे इन पांच तत्वोंका आत्मभूत विश्वको जो जानताहै वह पूजितहै १३९

सर्वलोकस्यजीवानांनदेहोतत्वभिन्नकः ॥
भूलोकात्सत्यपर्यंतंनाडिभेदंपृथक्पृथक् ॥१४०॥

अर्थ–संपूर्ण लोगोंका देह तत्त्वोंसे भिन्न नहींहै भूलोकसें सत्यलोकपर्यंत सबका शरीर पंचतत्वात्मक है परंतु नाडीका भेद अलग रहें ॥ १४० ॥

वामेवादक्षिणेवापिउदयात्पंचकीर्तितं ॥
अष्टधातत्वविज्ञानंश्रृणुवक्ष्यामिसुंदरि ॥१४१॥

अर्थ–बायें अथवा दहिनें स्वरमें पांचतत्त्व उदय कहेंहै हे सुंदरि, तिन तत्त्वोंका विज्ञान आठ प्रकारसे सूनों मैं कहताहूं ॥ १४१ ॥

प्रथमेतत्वसंख्यानंद्वितीयेश्वाससंधयः ॥
तृतीयेस्वरचिन्हानिचतुर्थेस्थानमेवच ॥ १४२ ॥

अर्थ–प्रथम भेदतत्त्वोंकी संख्या दूसरा भेदश्वासकी संधी तीसरा भेदस्वरोंके चिन्हहैं चौथे भेदविषें स्वरोंका स्थान जानना ॥ १४२ ॥

पंचमेतस्यवर्णश्चषष्ठेतुप्राणमेवच ॥
सप्तमेस्वादसंयुक्तःअष्टमेगतिलक्षणं ॥ १४३ ॥

अर्थ-पांचवें भेदमें तिसका वर्ण छटेमें प्राण और सातवेंमें स्वादका संयोग और आठवें भेदमें स्वरकी गतिका लक्षण ॥ १४३ ॥

एवमष्टविधंप्राणंविषुवंतंचराचरं ॥
स्वरात्परतरंदेविनान्यथात्वंबुजानने ॥ १४४ ॥

अर्थ-ऐसे आठ प्रकारका प्राण चराचर जगत्में व्यापक है हे देवि हे कमलनेत्रे स्वर ज्ञानसे अन्यज्ञान (अधिक) नहींहै ॥ १४४ ॥

निरीक्षितव्यंयत्नेनयदाप्रत्यूषकालतः ॥
कालस्यवंचनार्थायकर्मकुर्वंतियोगिनः ॥१४५॥

अर्थ-प्रात्त कालसें आदि ले सदैव यतन करके स्वर देखना क्योंकी योगीजन कालको हटानेंके वास्ते यह स्वरका कर्म करतेंहैं ॥ १४५ ॥

श्रुत्योरंगुष्ठकौमध्यांगुल्यौनासापुटद्वये ॥
वदनप्रांतकेचान्यांगुलींदद्याच्चनेत्रयोः ॥१४६॥

अर्थ-कानोंमें दोनों अंगूठे देने और दोनों नासिकाके पुटोंमें मध्यकी दो अंगूली और मुखप्रांत, होठोंके बीचमें अन्य तर्जनी अंगुलीको और अन्य दो अंगुलीयोंको नेत्रोंमें लगाके ॥ १४६ ॥

अस्यांतस्तुपृथिव्यादितत्वज्ञानंभवेत्क्रमात् ॥
पीतश्वेतारुणश्यामैर्बिंदुभिर्निरुपाधिभिः ॥१४७॥

अर्थ-फिर इस समाधिके बीचमें क्रमसे पृथ्वी आदि तत्त्वोंका ज्ञान होताहै उपाधि रहित पृथ्वी १ पीत जल २

श्वेत तेज ३ लाल वायु ४ कालाबिंदूरूप वर्ण पृथ्वि आदि कोंका दिखताहै आकाशका चित्रविचित्र वर्ण दिखताहै १४७

दर्पणेनसमालोक्यतत्रश्वासंचानिःक्षिपेत् ॥
आकारैस्तुविजानीयात्तत्त्वभेदंविचक्षणः॥१४८॥

अर्थ-पंडितजन ऐसे समाधि त्याग, दर्पणमें मुखको देख श्वासको छोडे फिर इन आकारोंसे पृथ्वी आदि तत्त्वोंका पहिचानें ॥ १४८ ॥

चतुरस्रंचार्द्धचंद्रंत्रिकोणंवर्तुलंस्मृतं ॥
बिंदुभिस्तुनभोज्ञेयासाकारैस्तत्त्वलक्षणं ॥१४९॥

अर्थ-चतुरस्र, त्रिकोण गोल, ऐसी बिंदुवोंके आकार दिखनेसे आकाशतत्त्वका लक्षण जानना ॥ १४९ ॥

मध्येपृथ्वीअधश्चापश्चोर्ध्वेवहतिचानलः ॥
तिर्यग्वायुप्रवाहश्चनभोवहतिसंक्रमे ॥ १५० ॥

अर्थ-मध्यमें पृथ्वी और नीचेको जल तथा ऊपरको अग्निस्वर वहताहै और वायुका तिरछा स्वर वहता है और दोनों स्वर मिलेहुए चलतेहों तो आकाशका स्वर जानना१५०

आपःश्वेताक्षितिःपीतारक्तवर्णोहुताशनः ॥
मारुतोनीलजीमूतआकाशःसर्ववर्णकः ॥ १५१ ॥

अर्थ-जल श्वेतवर्णहै पृथ्वी पीलावर्णवालीहै अग्नी लाल-वर्णवालाहै वायु नीला मेघके समान वर्णवालाहै आकाश चित्रवर्णवालाहै ॥ १५१ ॥

स्कंधद्वयेस्थितोवन्हिर्नाभिमूलेप्रभंजनः ॥
जानुदेशेक्षितितोयंपादांतेमस्तकेनभः ॥ १५२ ॥

अर्थ-अग्नि दोनों कंधोंपर स्थितहै वायु नाभिके मूलमें

स्थितहै पैरोंके अंतमें जल स्थितहै और आकाश मस्तकमें स्थितहै ॥ १५२ ॥

माहेयंमाधुरंस्वादंकषायंजलमेवच ॥
तिक्तंतेजःसमीराम्लआकाशःकटुकंतथा १५३॥

अर्थ-पृथ्वीतत्त्वका मधुर स्वादहै जल कसैलाहै अग्नि तत्त्व कडुवाहै वायुतत्त्व खट्टाहै आकाश कटुक मिरचसरीखा चर्चरा स्वादवालाहै ॥ १५२ ॥

अष्टांगुलंवहेद्वायुरनलश्चतुरंगुलः ॥
द्वादशांगुलमाहेयंषोडशांगुलवारुणः ॥ १५४ ॥

अर्थ-वायुका स्वर आठ अंगल वहताहै अग्नि स्वर चार अंगुल वहताहै पृथ्वीतत्त्व बारह अंगुलतक वहताहै जलका स्वर सोलह अंगुल वहताहै ॥ १५४ ॥

ऊर्ध्वंमृत्युरधःशांतितिर्यगुच्चाटनंतथा ॥
मध्येस्तंभंविजानीयात्सर्वत्रनभमध्यमम् ॥१५५॥

अर्थ-ऊपरके स्वर चले तो मृत्यु नीचेको चले तो शांति तिरछा चले तो उच्चाटन मध्यमें स्वर चले तो स्तंभ रोकना ये कार्य करनें और आकाशतत्त्व सब तर्फसे मध्यमहै १५५

पृथिव्यांस्थिरकर्माणिचरकर्माणिवारुणे ॥
तेजसिक्रूरकर्माणिमारणोच्चाटनेनिले ॥ १५६ ॥

अर्थ-पृथ्वीके स्वरमें स्थिरकर्म और जलके स्वरमें चरकर्म करै अग्नितत्त्वमें क्रूरकर्म और मारण उच्चाटन, कर्म वायुतत्त्वमें करै ॥ १५६ ॥

व्योम्निकिंचिन्नकर्तव्यमभ्यसेद्योगसेवनम् ॥
शून्यतासर्वकार्येषुनात्रकार्याविचारणा ॥१५७॥

अर्थ—आकाशतत्त्वके स्वरमें कछु शुभऽशुभ कार्य न करै किंतु योग सेवनका अभ्यास करै इस तत्त्वमें सब कार्योंमें शून्यता होतीहै इसमें कछु विचार न करना ॥ १५७ ॥

चिरंलाभेक्षितेर्ज्ञेयस्तत्क्षणात्तोयतत्वतः ॥ हानि
स्थावन्हिवाताभ्यांनभसोनिःफलोभवेत् ॥१५८॥

अर्थ—पृथ्वीतत्त्व वहता हो तो चिरकालमें लाभहो जलतत्त्वमें तात्काल सिद्धि होतीहै अग्नि और वायु तत्वमें हानि, आकाशतत्वमें निष्फल कार्य जानना ॥ १५८ ॥

पीतःशनैर्मध्यवाहीहनुर्यावद्गुरुर्ध्वनिः ॥
कवोष्णःपार्थिवोवायुःस्थिरकार्यप्रसाधकः १५९

अर्थ—पीतबर्ण और शनै २ तथा मध्यम चलनेंवाला ठोडीपर्यंत भारा शद्बवाला कछुक गरम २ ऐसा पृथ्वीका स्वरस्थिर कार्यको सिद्धकरनेंवाला कहाहै ॥ १५९ ॥

अधोवाहीगुरुध्यानःशीघ्रगःशीतलःसितः ॥
यःषोडशांगुलोवायुःसआपःशुभकर्मकृत् १६०॥

अर्थ—नीचेको वहनेंवाला भाराशद्बवाला शीघ्रचलनेंवाला शीतल सफेदवर्णवाला और सोलह अंगुलपर्यंत जिसका प्रवाह हो ऐसा जलतत्वका स्वर स्थिर कार्यको सिद्धकरनें-वाला कहाहै ॥ १६० ॥

आवर्तगश्चात्युष्णश्चशोणाभश्चतुरंगुलः ॥
ऊर्ध्ववाहीचयःक्रूरकर्मकारीसतैजसः ॥ १६१ ॥

अर्थ—भौं हरीखाके चलनेंवाला लालवर्णवाला चार अंगुलतक उपरको प्रवाहवाला ऐसा अग्नितत्त्वका स्वर क्रूर-कर्मोंको करनेंवाला कहाहै ॥ १६१ ॥

उष्णःशीतःकृष्णवर्णःतिर्यग्गामीचाष्टांगुलः ॥

वायुःपवनसंज्ञोयंचरकर्मसुसिद्धिदः ॥ १६२ ॥

अर्थ–जो गरम और टंडाहो कृष्णवर्णहो आठ अंगुलतक तिरछा चले ऐसा यह वायुका स्वर चरकर्मोंविषे सिद्धिदायकहै ॥ १६२ ॥

यःसमीरंसमरसःसर्वतत्वगुणावहः
अंबरंतंविजानीयाद्योगीनांयोगदायकं १६३

अर्थ–जो स्वर समान रसहो और सब तत्त्वोंके गुणको वहै वह आकाशस्वर होताहै वही योगियोंको योगका दाताहै१६३

तथापीतःश्चतुःष्कोणंमधुरंमध्यमाश्रितं ॥
भोगदंपार्थिवंतत्वंप्रवाहेद्वादशांगुलं ॥१६४ ॥

अर्थ–पितवर्णवाला तथा चतुष्कोण होवे मधुरहो मध्यमें वहताहो बारह अंगुलतक जिसका प्रवाहहो ऐसा पृथ्वीका तत्व भोगदेनेंवालाहै ॥ १६४ ॥

श्वेतमर्द्धेंदुसंकाशंस्वादुःकाषायमार्द्रकं ॥
लाभकृद्वारुणंकृत्वंप्रवाहेषोडशांगुलं ॥१६५ ॥

अर्थ–सफेद आधाचंद्रमाके समान आकारवाला कसैला, गीला ऐसा वरुणका तत्व लाभकार कहै वह सोलह अंगुल पर्यंत प्रवाहवालाहै ॥ १६५ ॥

नीलंचवर्तुलाकारंस्वाद्वम्लंतिर्यगाश्रितं ॥
चपलंमारुतंतत्वंप्रवाहेष्टांगुलंस्मतं ॥ १६६ ॥

अर्थ–नीलवर्ण गोल आकार स्वादसहित खटा तिरछा चलनेंवाला चपल आठ अंगुल प्रवाहवाला ऐसा वायुका स्वर जानना ॥ १६६ ॥

वर्णाकारंस्वादुवाहंअव्यक्तंसर्वगामिनां ॥

मोक्षदंनाभसंतत्वंसर्वकार्येषुनिःफलं ॥ १६७ ॥

अर्थ-जिसके वर्णआकार स्वाद ये प्रकट नहींहों ऐसे आकाशतत्वको मोक्षको देनेंवालेको पहिचाने यह सब कार्यो में निष्फलहै ॥ १६७ ॥

पृथ्वीजलेशुभेतत्वेतेजोमिश्रफलोदयं ॥
हानिमृत्युकरौपुंसामशुभौव्योममारुतौ ॥१६८॥

अर्थ-पृथ्वी और जल ये दोनों तत्व शुभहै अग्नितत्व मध्यमफल देताहै और आकाश तथा वायुतत्व पुरुषोंकि हानि तथा मृत्यु करनेंवाले है ॥ १६८ ॥

आपूर्वंपश्चिमेपृथ्वीतेजश्चदक्षिणेतथा ॥
वायुश्चोत्तरदिग्ज्ञेयोमध्यकोणगतंनभः ॥ १६९ ॥

अर्थ-पूर्वसे लेके पश्चिमतक पृथ्वीतत्वहै अग्नितत्व दक्षिण दिशामें जानना आकाशतत्व मध्यकोणमें जानना ॥ १६९ ॥

चंद्रेपृथ्वीजलेस्यातांसूर्येचाग्निर्यदाभवेत् ॥
तदासिद्धिर्नसंदेहोसौम्यासौम्येषुकर्मसु ॥१७०॥

अर्थ-चंद्रमाके स्वरविषें पृथ्वी और जलतत्व वहताहो सूर्यके स्वरमें अग्नितत्व वहताहो तब सौम्य और क्रूर कर्मोविषें सिद्धि जाननी इसमें संदेह नहीं ॥ १७० ॥

लाभपृथ्वीकृतोस्यान्हिशायांलाभकृज्जलं ॥
वन्हौमृत्युःक्षयंवायौनभस्थानंदहेत्क्वचित् ॥१७१॥

अर्थ-पृथ्वीतत्व चले तो दिनमें लाभ होवे रात्रीमें जलतत्व चले तो लाभ होय अग्नितत्वमें मृत्यु वायुतत्वमें क्षय और आकाशतत्वमें कभी स्थानका दाहभी होजाताहै १७१

जीवितव्येजयेलाभेकृष्यांचधनकर्मणि ॥

मंत्रार्थेयुद्धप्रश्नेचगमनागमनेतथा ॥ १७२ ॥
आयातिवारुणेतत्वेतत्रशत्रुःशुभक्षितौ ॥
प्रयातिवायुतोन्यत्रहानिमृत्युनभोनले ॥ १७३ ॥

अर्थ–जीवन, जय लाभ रेवती धनका कर्म मंत्र युद्ध, गमन आगमन इन कार्योंमें जलतत्व चलता हो तो शत्रुका आगमन जानै पृथ्वीतत्व चलता हो तो शुभफल होय वायु तत्व होय तो शत्रु अन्यजगंह चलाजाय आकाश और अग्नि तत्व होय तो हानी तथा मृत्यु होय ॥ १७२ ॥ १७३ ॥

पृथिव्यांमूलचिंतास्यातजीवस्यजलवातयोः ॥
तेजसिधातुचिंतास्यातशून्यमाकाशतोवदेत१७४

अर्थ–पृथ्वीतत्वमें मूलचिंता जाननी जल तथा वायुतत्वमें जीवचिंता अग्नितत्व चलता हो तो धातुचिंता कहनी आकाशतत्व होय तो, शून्य कछु चिंता नहींहै ऐसा जानना ॥१७४॥

पृथिव्यांबहुपादास्युर्द्विपदस्तायेवायुतः ॥
तेजसिचचतुष्पादोनभसिपादवर्जितः ॥ १७५ ॥

अर्थ–पृथ्वीतत्व चलता होय तो बहुत पैरवालोंकी चिंता जाननी जलतत्वमें दो पैरवाले जीवकी चिंता जलतत्वमें चौपाये पशुकी चिंता और आकाशतत्वमें पैर रहित वस्तुकी चिंता जानना ॥ १७५ ॥

कुजोवन्हीरविःपृथ्वीसौरीरायःप्रकीर्तितः ॥
वायुस्थानस्थितोराहुर्दक्षरंध्रप्रवाहकाः ॥ १७६ ॥

अर्थ–दक्षिण स्वरके प्रवाहविषें अग्नितत्वमें मंगळ और पृथ्वीतत्वमें सूर्य जलतत्वमें शनिश्चर और वायुतत्वमें राहु जानना ॥ १७६ ॥

जलंचंद्रोबुधःपृथ्वीगुरुर्वातःसितोनलः ॥

वामनाड्यांस्थिताःसर्वेसर्वकार्येषुनिश्चितां १७७

अर्थ–और बायां स्वर चलता हो तब जलतत्वमें चंद्रमा पृथ्वीतत्वमें बुध वायुमें बृहस्पति अग्नितत्वमें शुक्र जानना ये सब ग्रह संपूर्ण कार्योंमें इसी प्रकारसे इन तत्वोंमें निश्चय रहतेंहै ॥ १७७ ॥

प्रवासिप्रश्नआदित्येयदिराहुर्गतानिले ॥
तदासौचलितोज्ञेयःस्थानांतरमपेक्षिते ॥ १७८ ॥

अर्थ–कोई परदेशमें गयाहो उसका प्रश्न करे तहां प्रश्न समय सूर्यके स्वरमें राहु स्थित होवे तो वह परदेशी पुरुष पहिले स्थानसे चलदिया और दूसरी जगंह गया चाहताहै ऐसा जानना ॥ १७८ ॥

आयातिवारुणेतत्वेतत्रेवास्तिशुभंक्षितौ ॥
प्रवासीपवनेन्यत्रमृत्युरेवानलेवदेत् ॥ १७९ ॥

अर्थ–और जलके तत्व चलते समय प्रश्न करै तो परदेशी शीघ्रही आवे पृथ्वीतत्वमें शुभ फलहै वायुतत्व हो परदेशी अन्यजगंह गया जानना अग्नितत्वमें मृत्यु जाननी इसमें संदेह नहींहै ॥ १७९ ॥

पार्थिवेमूलविज्ञानंजीवज्ञानंजलेतथा ॥
आग्नेयांधातुविज्ञानंव्योम्निशून्यंविनिर्दिशेत् १८०

अर्थ–पृथ्वीतत्वमें मूलचिंता जाननी जलतत्वमें जीवचिंता अग्नितत्वमें धातुचिंता आकाशतत्वमें सून्य कछु चिंता न जाननी ॥ १८० ॥

तुष्टिपुष्टीरतिक्रीडाजयहास्यधराजले ॥
तेजोवायोश्चसुप्ताख्योज्वरकंपःप्रवासिनः॥१८१॥

अर्थ–परदेशीके प्रश्नसमय पृथ्वी वा जलतत्व होवे तो

तुष्टि पुष्टि रमण क्रीडा विजय हास्य यह फलहै अग्नि वा वायुतत्व होवे तो सुस्ती आदि रोग ज्वर कंप ये परदेशीके जाननें ॥ १८१ ॥

गतायुर्मृत्युराकाशेतत्वस्थानेप्रकीर्तिताः ॥
द्वादशैताःप्रयत्नेनज्ञातव्यादैशिकैःसदा ॥१८२॥

अर्थ–आकाशतत्वमें आयुरहित परदेशीकी मृत्यु कहना ऐसे ये बारह प्रश्न स्वरोदयके देशकालको जाननेंवालोंनें यतनसे तत्वोंके स्थानपर कहेहैं ॥ १८२ ॥

पूर्वायांपश्चिमेयाम्येउत्तरस्यांयथाक्रमं ॥
पृथिव्यादीनिभूतानिबलिष्ठानिविनिर्दिशेत्१८३

अर्थ–पूर्व, पश्चिम दक्षिण उत्तर इन दिशाओंमें पृथ्वी आदितत्व यथाक्रमसे बलिष्ठ कहेहैं ॥ १८३ ॥

पृथिव्यापःस्तथातेजोवायुराकाशमेवच ॥
पंचभूतात्मकोदेहोज्ञातव्यश्चवरानने ॥ १८४ ॥

अर्थ–हेवरानने, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश ऐसे क्रमसे कहे इन पांचतत्वोंकाही शरीर जानना ॥ १८४ ॥

अस्थिमांसंत्वचानाडीरोमंचैवतुपंचमं ॥
पृथ्वीपंचगुणाप्रोक्ताब्रह्मज्ञानेनभाषितं ॥ १८५ ॥

अर्थ–हड्डी मांस त्वचा नाडी पांचवा रोम ऐसे इन पांच गुणोंवाली पृथ्वी कहींहै यह ब्रह्मज्ञानियोंका कथनहै॥१८५॥

शुक्रशोणितमज्जाश्चमूत्रंलालंचपंचमम् ॥
आपःपंचगुणाःप्रोक्ताब्रह्मज्ञानेनभाषितम् ॥१८६

अर्थ–वीर्य शोणित, स्त्रीका रज, मज्जा मूत्र पांचवा लाल ये पांच गुण जलके है ऐसा ब्रह्मज्ञानियोंका कथनहै ॥ १८६ ॥

क्षुधातृषातथानिद्राकांतिरालस्यमेवच ॥
तेजःपंचगुणंप्रोक्तंब्रह्म० ॥ १८७ ॥

अर्थ—क्षुधा, तृषा, निद्रा कांति, आलस्य ये पांच गुण अग्निके है ऐसा ब्रह्मज्ञानियोंका कथनहै ॥ १८७ ॥

धावनंचलनंगंधंसंकोचनप्रसारणे ॥
वायोःपंचगुणाःप्रोक्ताब्रह्म० ॥ १८८ ॥

अर्थ—भाजना चलना, गंध, सुकडना फैलना ये पांच गुण वायुकेहै ॥ १८८ ॥

रागद्वेषस्तथालज्जाभयमोहश्चपंचमः ॥
नभपंचगुणंप्रोक्तंब्रह्मज्ञानेनभाषितं ॥ १८९ ॥

अर्थ—रागद्वेष लज्जा भय, पांचवा मोह ये पांचगुण आकाशके है ऐसा ब्रह्मज्ञानियोंका कथनहै ॥ १८९ ॥

भूम्याःपलानिपंचाशच्चत्वारिंशदपस्तथा ॥
अग्नेस्त्रिंशत्पुनर्वायोर्विंशतिर्नभसोदश ॥ १९० ॥

अर्थ—शरीरमें पृथ्वी पचाश पल प्रमाणहै जल ४० पल है अग्निका तीस पल प्रमाणहैं वायु वीस पल और आकाश दश पल प्रमाणहै ॥ १९० ॥

पार्थिवेचिरकालेचलाभश्चापक्षणाद्भवेत् ॥
जायतेपवनात्स्वल्पःसिद्धयोथग्नौविनश्यति १९१

अर्थ—पृथ्वीतत्वमें बहुत कालमें लाभ होवे जलतत्वमें तात्काल वायुमें स्वल्प लाभ अग्नितत्वमें सिद्धहुआ कार्यभी नष्ट हो जाताहै ॥ १९१ ॥

पृथ्व्याःचअपांदाग्गुणास्तेजोवेद्विवायुतः ॥
नभएकगुणंचैवतत्वज्ञानमिदंभवेत् ॥ १९२ ॥

अर्थ–पृथ्वीके रूप, आदि, पांचगुणहै जलके चार गुणहै अग्निके दो गुण और आकाश एकही गुणवाला है ऐसे यह तत्वज्ञानहै ॥ १९२ ॥

फूत्कारकृत्प्रस्फुटिताविदीर्णापतिताधरा ॥
ददातिसर्वकार्येषुअवस्थाशद्दसंफलं ॥ १९३ ॥

अर्थ–फूत्कार करनेंवाली फूटी हुई फटीहुई गिरीहुई ऐसी पृथ्वी है सो सब कार्योंमें अवस्थाके सदृश फल देतीहै१९३

धनिष्ठारोहिणीज्येष्ठानुराधाश्रवणस्तथा ॥
अभिजीचोत्तराषाढापृथ्वीतत्वमुदाहृतम्॥१९४॥

अर्थ–धनिष्ठा रोहिणी ज्येष्ठा अनुराधा श्रवण अभिजित उत्तराषाढा ये नक्षत्र पृथ्वीतत्वहै ॥ १९४ ॥

पूर्वाषाढातथाश्लेषामूलमार्द्राचरेवती ॥
उत्तराभाद्रपदाचैवजलंशतभिषाप्रिये ॥ १९५ ॥

अर्थ–हे प्रिये, पूर्वाषाढा आश्लेषा मूल आर्द्रा, रेवती उत्तरा भाद्रपदा शतभिषा ये जलतत्वहै ॥ १९५ ॥

भरणीकृत्तिकापुष्यमघापूर्वाचफल्गुनी ॥
पूर्वाभाद्रपदास्वातीतेजस्तत्वमितिप्रिये ॥१९६॥

अर्थ–हे प्रिये भरणी कृत्तिका पुष्य मघा पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाभाद्रपदा स्वाती ये अग्नितत्वहै ॥ १९६ ॥

विशाखोत्तरफल्गुन्यौहस्तचित्रेपुनर्वसु ॥
अश्विनीमृगशीर्षेचवायुस्तत्वमुदाहृतं ॥ १९७ ॥

अर्थ–विशाखा उत्तराफाल्गुनी हस्त चित्रा पुनर्वसु अश्विनी मृगशिर ये वायुतत्व कहतेहैं ॥ १९७ ॥

वहन्नाडीस्थितोदूतोयत्पृच्छतिशुभाशुभं ॥

तत्सर्वंसिद्धिदंप्रोक्तंशून्येशून्येनसंशयः ॥ १९८ ॥

अर्थ–जो नासास्वर चलताहो उसीतर्फ कोई दूत आयकेबैठे अथवा जो शुभाशुभफल पूछे वह संपूर्ण सिद्ध होताहै और शून्यनाडीकीतर्फ बैठे शून्यफलजानना इसमेंसंदेहनहीं॥१९८

तत्वेरामोजयंप्राप्तःसुतत्वेचधनंजयः ॥
कौरवानिहताःसर्वेयुद्धेतत्वविपर्यतः ॥ १९९ ॥

अर्थ–शुभतत्वमें रामचंद्र विजयपाये शुभतत्वमेंहीं अर्जुन विजयपाये और तत्वोंकेही विपरीतसे सब कौरव युद्धमें मारेगये ॥ १९९ ॥

जन्मांतरायसंस्कारात्प्रसादादथवागुरोः ॥
केनविज्ञायतेतत्वेवासनातिमलात्मना ॥२००॥

अर्थ–पूर्वजन्मके संस्कारसे अथवा गुरुकी प्रसन्नतासे कीन्हींक शुद्ध अंतःकरणवालोंको तत्वज्ञानकी वासना बोध होता है ॥ २०० ॥

॥ अथपंचतत्वध्यानं ॥

लंबीजंधरणीध्यायेचतुरस्रंतुपीतभं ॥
सुगंधंस्वर्णवर्णत्वंआरोग्यंदेहलाघवं ॥ २०१ ॥

अर्थ–लं, ऐसाबीजको पृथ्वी तत्वरूप ध्यान करै पृथ्वीको चकोर और पीतवर्णवाली चितवनकरै और सुंदर गंधयुक्त तथा सुवर्णसरीखी कांतिका ध्यान करै ॥ ऐसे इसका ध्यान करने वालेको शरीरके हलकापनकी प्राप्ति होती है ॥२०१॥

वंबीजंवारुणंध्यायेतअर्धचंद्रंशशिप्रभं ॥
क्षुतृषादिहिसुख्यत्वंजलमध्येचमज्जनं ॥ २०२ ॥

अर्थ–वं, ऐसे इस बीजको जलतत्वरूप ध्यावे और आधाचंद्रमाके समान आकारवाला ध्यावै ऐसे इसका ध्यान

करै इसका ध्यान करनेंवाला पुरुष क्षुधा तृषाको सहै जलमें गोतामार डूबके रहनेंकी सामर्थ्यवाला होवे ॥ २०२ ॥

रंबीजंशिखिनंध्यायेत्रिकोणमरुणप्रभं ॥
बव्हन्नपानभोक्तृत्वंमातपाग्निसहिष्णुता ॥२०३

अर्थ–रंबीजको अग्निसे उत्पन्नहुवेको त्रिकोण और लालवर्णवालेको ध्यावे इस्से बहुत खानापिना घाम अग्नि आदिका सहना हो सकताहै ॥ २०३ ॥

यंबीजंपवनंध्यायेद्वर्तुलंशामलप्रभं ॥
आकाशगमनाद्यंचपक्षिवद्गमनंतथा ॥ २०४ ॥

अर्थ–यं यह बीज वायुतत्वमें ध्यान करनेको योग्यहै गोल और श्यामवर्णवालाहै इस्से आकाशमें गमन आदी पक्षीकी तरह उडना आदी होसकताहै ॥ २०४ ॥

हंबीजंगगनंध्यायेनिराकारंबहुप्रभं ॥
ज्ञानंत्रिकालविषयमैश्वर्यमणिमादिकं ॥ २०५ ॥

अर्थ–हं, इस बीजको आकाशतत्वमें निराकार और बहुत कांतिवालेको ध्यावे इसके अभ्याससे त्रिकालकाज्ञान तथा अणिमा आदी आठ सिद्धियोंकी प्राप्ति होती है ॥ २०५ ॥

स्वरज्ञानीनरोयत्रधनंनास्तिततःपरं ॥
गम्यतेस्वरज्ञानेनअनायासंफलंलभेत् ॥ २०६ ॥

अर्थ–जहां स्वरज्ञानीपुरुष होवे तहां उससे परे कोई धन नहीं है क्योंकि जो कोई स्वरके ज्ञानसे गमन करताहै उसको परिश्रमके विनाही फलकी प्राप्ति होतीहै ॥ २०६ ॥

॥ देव्युवाच ॥ देवदेवमहादेवमहाज्ञानंस्वरोदये ॥
त्रिकालंविषमंचैवकथंभवतिशंकर ॥ २०७ ॥

॥ इतिपंचतत्वध्यानं ॥

अर्थ-ऐसे सुन पार्वतीबोली हे देव देव महादेव आपनें जो यह स्वरोदय महाज्ञान कहा सो त्रिकाल विषय, भूत भविष्यत् वर्त्तमानके हालको कैसे मालूम कहताहै ॥ २०७ ॥

॥ अथयुद्धविजयः ॥

॥ ईश्वर० ॥ अर्थकालोजयप्रश्नशुभाशुभमितित्रिधा॥ सतत्रिकालविज्ञानंनान्यद्भवतिसुंदरी२०८

अर्थ-शिवजी बोले, हें सुंदरी, प्रयोजनकी समय जयके प्रश्न शुभाशुभ ऐसे तीन प्रकारका ज्ञानहै सो यह तीन प्रकारका ज्ञान स्वरोदयके विना अन्य किसीसे नहीं होताहै ॥ २०८ ॥

॥ अथ युद्धविषयविचार ॥

तत्वेशुभाशुभंकार्यंतत्वेजयपराजयं ॥
तत्वेसमर्घमाहर्घंतत्वेत्रिपदमुच्यते ॥ २०९ ॥

अर्थ-तत्वमेंही शुभाशुभ कार्य तत्वमें जय पराजय तत्वमें सुभिक्ष दुर्भिक्षका विचारहै ऐसे त्रिपद तत्वहै अर्थात् इन तीनों कार्योंको पहिचाननें वाला कहा है ॥ २०९ ॥

॥ देव्युवाच० ॥ देवदेवमहादेवसर्वसंसारसागरे॥
किन्नराणांपरंमित्रंसर्वकार्यार्थसाधकं ॥ २१० ॥

अर्थ-पार्वती पूछतीहै. हे देवदेव महादेव, इस संसार सागरमें मनुष्योंका परम मित्र और सब कार्योंको सिद्ध करनेवाला क्याहै ॥ २१० ॥

॥ ईश्वरउ० ॥ प्राणएवपरंमित्रंप्राणएवपरःसखा ॥
प्राणतुल्यपरोबंधुर्नास्तिनास्तिवरानने ॥ २११ ॥

अर्थ-शिवजी कहतेहैं. प्राणही परममित्र है प्राणही परम सखाहै हे वरानने, प्राणोंके समान परे बंधुनहींहै॥ २११ ॥

॥देव्युवा०॥कथंप्राणस्थितोवायुःसदेहंप्राणरूप
कं॥ तत्वेषुसंचरन्प्राणोज्ञायतेयोगिभिःकथं २१२

अर्थ-पार्वती पूछतीहै, प्राणोंमें वायु कैसे स्थितहै और देह क्या प्राणरूपही है और तत्वों विषें विचरताहूआ प्राणवायुयोगीजनोंसे कैसे जाना जाताहै ॥ २१२ ॥

॥शंकरउ०॥कायानगरमध्येतुमारुतोरक्षपालकः॥
प्रवेशोदशभिःप्रोक्तोनिर्गमेद्वादशांगुलः॥२१३॥

अर्थ-शिवजी कहतेहै, इस शरीररूपी नगरमें वायु यह प्राण रक्षपाल चौकसी करनेंवाला है सो वह भीतरको प्रवेश होनेंके समय दश अंगुलका और बाहिर निकसनेंके समय बारह अंगुलका कहाहै ॥ २१३ ॥

गमनेतुचतुर्विंशन्नेत्रवेदास्तुधावने ॥
मैथुनेपंचषष्ठिश्चशयनेचशतांगुलम् ॥ २१४ ॥

अर्थ-और गमन समय चौविस अंगुल भाजनेंके समय बियालीस ४२ अंगुल मैथून करनेंके समय पैंसट अंगुल सोनेंके समय सो१००अंगुल प्राणवायुकी गती जानना २१४॥

प्राणस्यतुगतिर्देविस्वभावाद्वादशांगुलम् ॥
भोजनेवमनेचैवगतिरष्टादशांगुलम् ॥ २१५ ॥

अर्थ-हे देवी, स्वभावसेही प्राणवायुकी गती बारह अंगुलकी है भोजन करनेंके समय तथा वमन करनेंके समय प्राणकी गती अठारह अंगुल हो जातीहै ॥ २१५ ॥

एकांगुलकृतेन्यूनंप्राणेनिष्कमतामता ॥
आनंदस्तुद्वितीयेस्यात्कविशक्तिस्तृतीयके २१६

अर्थ-जो यदि योगीजन प्राणाकी गती एक अंगुल कम करलेवे तो निष्कामताकी सिद्धि हो जाती है और दो

अंगुल कम करनेंसे आनंद प्राप्त होताहै तीन अंगुल कम करनेंसे कविताकी शक्ति हो जातीहै ॥ २१६ ॥

वाचासिद्धिश्चतुर्थेश्चदूरदृष्टिस्तुपंचमे ॥
षष्ठेत्वाकाशगमनंचंढवेगश्चसप्तमे ॥ २१७ ॥

अर्थ–चारअंगुल कम करनेंसे वाणीकी सिद्धि और पांच अंगुल कम करनेंसे दूरतक दृष्टि पहुंचनी छह अंगुल कम करनेंसे आकाशमें गमन और सात अंगुलतक करनेंसे प्रचंड वेग हो जाताहै ॥ २१७ ॥

अष्टमेसिद्धयश्चाष्टौनवमेनिधयोनव ॥
दशमेदशमूर्तिश्चछायानेकादशेभवेत् ॥ २१८ ॥

अर्थ–आठ अंगुल कम करले तो अष्टसिद्धि और नव अंगुल कम करले तो नवविधि दश अंगुल कम करले तो दश प्रकारके रूप, और ग्यारह अंगुल कम करलेवे तो शरीरकी छायाका अभाव प्राप्त हो जाताहै ॥ २१८ ॥

द्वादशेहंसचारश्चगंगामृतरसंपिबेत् ॥
आनखाग्रंप्राणपूर्णेकस्यभक्ष्यंचभोजनं ॥ २१९ ॥

अर्थ–बारह अंगुलश्वास कमचले तोगंगामृतरूप रसको पीता है ऐसे मस्तकसे लेके नखपर्यंत जो योगी प्राणोंको पूर्ण करलेताहै उसको फिर भोजन करनेंकी कछु अपेक्षा नहीं रहतीहै ॥ २१९ ॥

एवंप्राणविधिःप्रोक्तःसर्वकार्यफलप्रदः ॥
ज्ञायतेगुरुवाक्येनविद्याशास्त्रस्यकोटिभिः ॥२२०

अर्थ–ऐसे सब कार्योंके फलको देनेंवाली प्राणविधि कहीहै इसका ज्ञान गुरुके वचनसे होताहै विद्या और करोडों शास्त्रोंसे नहीं होता ॥ २२० ॥

प्रातश्चंद्रोरविःसायंयदिदैवान्नलभ्यते ॥
मध्यान्होमध्यरात्रेचपरतस्तुप्रवर्तते ॥ २२१ ॥

अर्थ–जो यदि दैवयोगसे प्रातःकाल चंद्रमा और सायं काल सूर्यस्वर न मिले तो मध्यान्हसे अथवा आधी रात्रीसे पीछे प्रवर्त्त होतेहै ॥ २२१ ॥

दूरयुद्धेजयीचंद्रःसमीपेतुदिवाकरः ॥
वहनाड्यांगतःपादंसर्वसिद्धिप्रजायते ॥ २२२ ॥

अर्थ–दूर देशमें युद्ध करना होवे तो चंद्रमा विजयकारी है समीपदेशके युद्धादिकमें सूर्यविजयकारीहै और जौनसा- स्वर चलताहो उसी स्वरको आगे करके गमनकरे तो वह गमन सब सिद्धियोंको देनेवालाहै ॥ २२२ ॥

यात्रारंभेविवाहेचप्रवेशेनगरादिके ॥
शुभकार्येषुसर्वेषुचंद्रवारःप्रशस्यते ॥ २२३ ॥

अर्थ–यात्रारंभ विवाह नगर आदिका प्रवेश इत्यादिक शुभ कार्य चंद्रमाकास्वर चलतेसमय सिद्ध होतेहैं ॥ २२३ ॥

अयनतिथिदिनेशस्वीयतत्वेअयुक्तेयदिवहति कदाचिद्दैवयोगेनपुंसां ॥ सजयतिरिपुसैन्यंस्तं भमात्रःस्वरेणप्रभवतिनचविघ्नंकेशवस्यापिलो के ॥ २२४ ॥

अर्थ–अयन, तिथि वार इनके स्वामियोंसे युक्त हुए आप- नें स्वरका तत्व जो यदि पुरुषोंके दैवयोगसे वहता होय तो वह पुरुष शत्रुकी सेनाको स्वरके स्तंभ रोकनेंसेही जीतता है और विष्णुके लोकमें प्राप्त होनेंविषेंभी उसकै विघ्न नहीं होताहै ॥ २२४ ॥

जीवंरक्षजीवंरक्षजीवांगेपरिधायच॥
जीवोजयातियोयुद्धेजीवन्जयतिमेदिनी२२५॥

अर्थ–जो पुरुष जीवांग, हृदयको वस्त्रसे आच्छादितकर युद्धमें जीवंरक्ष जीवंरक्ष ऐसा जपताहै वह संपूर्ण पृथ्वीको जीत लेताहै ॥ २२५ ॥

भूमौजलेचकर्तव्यंगमनंशांतिकर्मतु ॥
वन्हौवायुप्रदीप्तेषुखेःपुनर्नोभविष्यति ॥२२६॥

अर्थ–शांतिके कर्मोंमें पृथ्वी वा आकाशतत्वमें गमन करै और क्रूर युद्ध आदिकर्मोंमें अग्नि तथा वायुतत्वके चलतेसमय गमन करै ॥ २२६ ॥

जीवेनशस्त्रंबध्नातिजीवेनैवविकाशयेत् ॥
जीवेनप्रक्षिपेच्छस्त्रंयुद्धेजयतिसर्वदा॥ २२७॥

अर्थ–जीव करके शस्त्रको बांधै यानें जौ नासास्वर चलताहो उसही अंगमें शस्त्रको धारणकरै और जीवसे, जोनासास्वर चलताहो उसही हाथसे शस्त्रको खोले और उसहीसे शत्रुकेप्रति फेकैं वह पुरुष युद्धमें सदा जीतताहै ॥२२७॥

आकृष्यप्राणपवनंसमारोहेतवाहनं॥
समुत्तरेत्पदंदद्यात्सर्वकार्याणिसाधयेत्॥२२८॥

अर्थ–जो पुरुष प्राणवायुको ऊपरीको खींचके सवारी पैचढै और श्वास उतरते समय, रकाव, आदिपै पैर धरे वह सब कार्योंको साधताहै ॥ २२८ ॥

अपूर्णेशत्रुसामग्रीपूर्णेवास्वबलंयथा ॥
कुरुतेपूर्वतत्वस्थोजयत्येकोवसुंधरां॥ २२९॥

अर्थ–खालीस्वरमें शत्रुकी सेना आदिसामग्री तैयार होवे और पूर्ण स्वरमें अपनी सेनाको तैयार करै ऐसे पूर्ण तत्वमें

स्थितहुआ पुरुष अकेलाही पृथ्वीको जीत लेताहै ॥ २२९ ॥

यन्नाडीवहतेचांगेतस्यामेवाधिदेवता ॥
सन्मुखोपिदिशातेषांसर्वकामफलप्रदा ॥२३०॥

अर्थ–शरीरमें जौनसीनाडी स्वर चलताहै और उसही नाडीमें नाडीका अधिपति देवताहो और तिनकी दिशा सन्मुख होय तो वह दिशा सब कामोंको सिद्ध करनेंवालीहै २३०

आदौतुक्रियतेमुद्रापश्चात्युद्धंसमाचरेत् ॥
सर्पमुद्राकृतायेनतस्यसिद्धिर्नसंशयः ॥ २३१ ॥

अर्थ–पहले तो मुद्राको करे पीछे युद्ध करे जो पुरुष सर्प मुद्रा करताहै उसकी सिद्धि होतीहै इसमें संदेह नहीं ॥२३१॥

चंद्रप्रवाहेप्यथसूर्यवाहेभटासमायांतीचयोद्धुकामाः॥ समीरणस्तत्वविदांप्रतोयाशून्येतिसातुप्रतिकार्यनाशम् ॥ २३२ ॥

अर्थ–चंद्रमाके स्वरमें अथवा सूर्यके स्वरमें शूर वीर योद्धायुद्ध करनेंको जातेहै तहां वायूतत्व, अथवा पूर्णस्वर चलताहुआ शुभहै ऐसे तत्ववेत्ताओंका निश्चयहै और खालीस्वर कार्यको नाश करनेंवाला कहाहै ॥ २३२ ॥

यांदिशंवहतेवायुर्युद्धंतद्दिशिदापयेत् ॥
जयत्येवनसंदेहशक्रोपियदिचाग्रतः ॥ २३३ ॥

अर्थ–जिस दिशाको बांयी या दहिनी तर्फ वायुस्वर चलताहो उसी दिशामें युद्धकेवास्ते जावे तो यदि आगे इंद्र होवे तो उसकेभी जीतके आवताहै ॥ २३३ ॥

यत्रनाड्यांवहेद्वायुस्तदंगेप्राणमेवच ॥
आकृष्यगच्छेत्कर्णांतंजयत्येवपुरंदरम् ॥ २३४॥

अर्थ-जौनसास्वर चलताहो उसी अंगविषे प्राणको स्वरको कर्णपर्यंत खींचके गमनकरे तो युद्धमें इंद्रकोभी जीत सकताहै ॥ २३४ ॥

प्रतिपक्षप्रहारेभ्यःपूर्णांगंयोभिरक्षते ॥
नतस्यरिपुभिःशक्तिर्बलिष्ठैरपिहन्यते ॥ २३५ ॥

अर्थ-जो पुरुष युद्धमें शत्रुके प्रहारोंसे अपने पूर्ण अंगकी रक्षा करताहै अर्थात् जो नासास्वर चलताहो उस अंगकी रक्षाकरताहै उसकी शक्ति, बलवाले शत्रुओंसेभी हत नहीं होती ॥ २३५ ॥

अंगुष्ठतर्जनीवंशेपादांगुष्ठेस्तथाध्वनिः ॥
युद्धकालेचकर्तव्यंलक्षयोद्धाजयीभवेत् ॥२३६॥

अर्थ-जो पुरुष युद्धके समय अंगुठा और तर्जनी अंगुलीकी पोरीविषैं शब्द करै अथवा पैरोंके अंगूठेमें ध्वनि करै कुडकावे वह लाखों योद्धा ओंको जीतताहै ॥ २३६

निशाकरेरवौवारमध्येयस्यसमीरणः ॥
स्थितोरक्षेपिगंतानिजयकांक्षिमतस्तदा ॥ २३७

अर्थ-जिस पुरुषके चंद्रमाके स्वरमें अथवा सूर्यके स्वरमें वायुतत्व चलताहो उस समय जयकी इच्छा करनेंवाला पुरुष गमन करे तो सब दिशाओंकी रक्षा करताहै ॥ २३७ ॥

श्वासप्रवेशकालेचदूतोजल्पतिवांछितं ॥
तस्यार्थसिद्धिमायातिनिर्गमेनैवसुंदरि ॥२३८॥

अर्थ-हे सुंदरी, जिस मनुष्यके भीतरको श्वास प्रवेश होतेहुए कोई दूत उसकी वांछित बातको कहै तो उसका वह प्रयोजन सिद्ध होताहै और श्वासके निर्गमन समय कार्य सिद्ध नहीं होता ॥ २३८ ॥

लाभादिन्यपिकार्याणिपृष्टानिकथितानिच ॥
जीवेविंशतिसिद्ध्यंतिहानिर्निःसरणेभवेत्॥२३९

अर्थ–लाभआदिक संपूर्णही कहेहुए अथवा पूछेहुए कार्य स्वरप्रदेश होतेसमय सिद्ध होतेहैं और स्वरके बाहिर निकसनेंके समय हानि होतीहै ॥ २३९ ॥

नरेदक्षास्वकीयाचस्त्रियांवामाप्रशस्यते ॥
कुंभकोयुद्धकालेचतिस्रोनाड्यःस्त्रयोगतिः॥२४०

अर्थ–पुरुषके अपनी दहिनीनाडी और स्त्रीके बायींनाडी स्वर चलता शुभ कहाहै युद्धकालमें कुंभकनाडी श्रेष्ठहै ऐसे तीन नाडी है और इनकी गतिभी तीनही है ॥ २४० ॥

हकारस्यसकारस्यविनाभेदंस्वरःकथं ॥
सोहंहंसपदेनैवजीवोजयतिसर्वदा ॥ २४१ ॥

अर्थ–हकार और सकारके भेदविना स्वरज्ञान कैसे होवे किंतु सोहं, हंस, इन दोनों पदोंसेही जीव सदा जयको प्राप्त होता है ॥ २४१ ॥

शून्यांगंपूरितंकृत्वाजीवांगंगोपयेज्जयः ॥
जीवांगंघातमाप्नोतिशून्यांगंरक्षतेसदा ॥ २४२ ॥

अर्थ–शून्यअंगको अर्थात् जो नासास्वर न चलताहो उसको पूर्ण करके जीवांगकी, अर्थात् जो स्वर पूर्ण चलताहो उस अंगविषें जयकी रक्षाकरे क्योंकि जीवांगमेंही घात प्राप्त होताहै और शून्य स्वरवाला अंग सदा रक्षा करताहै॥२४२॥

वामेवायदिवादक्षेयदिपृच्छतिपृच्छकः ॥
पूर्णेघातोनजायेतशून्येघातंविनिर्दिशेत्॥२४३॥

अर्थ–जो कोई दूत बायांस्वर चलते समय अथवा दहिना-स्वर चलते समय युद्धकी बात पूछे तहां पूर्णस्वर चलताहो तो

घात न जानना और शून्य स्वर होवे तो घात बतलाना ॥२४३॥

भूतत्वेनोदरेघातःपदस्थानेंबुनाभवेत् ॥
उरस्थानेनितत्वेनकरस्थानेचवायुना ॥ २४४ ॥

अर्थ–पृथ्वीतत्व होवे तो उदरमें घात जलतत्व होय तो पैरमें घात अग्नितत्व होय तो जांघोंमें घात वायुतत्व होय तो हाथमें घात शस्त्र लगना बताहै ॥ २४४ ॥

सिरसिव्योमतत्वेवाज्ञातव्योघातनिर्णयः ॥
एवंपंचविधोघातःस्वरशास्त्रप्रकाशितः ॥ २४५ ॥

अर्थ–आकाशतत्व होय तो शिरमें घात जानना ऐसे पांच प्रकारका घात स्वरोदय शास्त्रमें कहाहै ॥ २४५ ॥

युद्धकालेयदाचंद्रःस्थायीजयतिनिश्चितं ॥
यदासूर्यप्रवाहस्तुयायीविजयतेतथा ॥ २४६ ॥

अर्थ–युद्धकालमें जो चंद्रमाका स्वर चलताहो तो निश्चय स्थायी अर्थात् अपनें देशमें स्थितहुआ राजा जीतताहै और सूर्यस्वर चलताहोवे तो यायी अपनें देशसे दूसरेके देशमें जाके युद्ध करनेंवाला जीतताहै ॥ २४६ ॥

जयमध्येतुसंदेहोनाडीमध्येतुलक्षयेत् ॥
सुषुम्नायगतःप्राणंसमरेशत्रुसंकटे ॥ २४७ ॥

अर्थ–जयके मध्यमें जीतनेंमें जो संदेह होवे तो मध्यकी नाडीको देखे जो यदि सुषुम्णा नाडी विषें प्राणवायु चलताहोय तो युद्धमें शत्रुको संकट होवे ॥ २४७ ॥

यस्यांनाड्यांभवेत्चारःतादृशंयुद्धसंश्रयेत् ॥
तदासौजयमाप्नोतिनात्रकार्यविचारणाः॥२४८॥

अर्थ–जौनसी नाडी चलतीहोवे उसही दिशामें युद्धसम-

य खडा होना कि जैसे चंद्रमाको पूर्व और उत्तरदिशा और सूर्यकी दक्षिण तथा पश्चिमदिशा कहीहै तिनमेंही खडा होनेंसे जयप्राप्त होता है इसमें संदेह नहीं है ॥ २४८ ॥

यदिसंग्रामकालेतुवामनाडीयदाभवेत् ॥
स्थापनोविजयंविंद्यात्रिपुवश्योदयोपिच ॥२४९

अर्थ-जो यदि युद्धसमयमें बामनाडी चले तो युद्धमें स्थायी देशवासीका जय होवे और यायी परदेशसे आया-हुआ शत्रु वशमें होवे ॥ २४९ ॥

यदिसंग्रामकालेचसूर्यस्तुव्यावृतोवहेत् ॥
तदाजयीजयंविंद्यात्सदेवासुरमानवान् ॥२५०॥

अर्थ-और जो यदि युद्धकालमें निरंतर सूर्यकास्वर वहता होय तो यायी गमन करनेंवालेकीही देवता तथा असुर वा मनुष्योंमें जय होतीहै ॥ २५० ॥

रणेहरतिशत्रुस्तंवामायांप्रविशेन्नरः ॥
स्थानंविषवचाराभ्यांजयसूर्येणधावति ॥ २५१ ॥

अर्थ-जो मनुष्य बायांस्वर चलतेसमय युद्धमें प्रवेश होता है उसको उसका शत्रु मार देताहै और सुषुम्णानाडी चलते समय गमन करनेंवालेको स्थान मिलताहै सूर्यके स्वर चलतेसमय विजय मिलताहै ॥ २५१ ॥

युद्धेद्वयेकृतेप्रश्नेपूर्णस्यप्रथमोजयः ॥
रिक्तेचैवद्वितीयेतुजयीभवतिनान्यथा ॥ २५२ ॥

अर्थ-यदि कोई दोजनोंके युद्धका एकही वार प्रश्नकरे तो पूर्णस्वर चलता होय तो पहलेकी जय और खालीस्वर चलता होय तो दूसरेकी जय बताना इसमें संदेह नहीं ॥ २५२ ॥

पूर्णानाडीगतःपृष्ठेशून्यांगंवदताग्रतः ॥

शून्यस्थानेकृतेशत्रुम्रियतेनात्रसंशयः ॥ २५३ ॥

अर्थ–जो यदी पूर्णस्वर चलतेहुए युद्धमें गमन किया जावे तो शत्रु पीड देके चलाजावे और शून्यनाडीके समय गमन कियाहो तो शत्रु सामनें आवे और शत्रूको शून्यस्थान जौनसा स्वर न चलताहो उस अंगकीतर्फ करे तो शत्रुको मृत्यु होताहै इसमें संदेह नहीं ॥ २५३ ॥

वामभागेसमंनामयस्यतस्यजयोभवेत् ॥
पृच्छकोदक्षिणेभागेविजयीविषमाक्षरः ॥ २५४ ॥

अर्थ–जो कोई बायींतर्फ बैठके सम अक्षरोंको उच्चारण करके प्रश्ण करै उसकी जय होतीहै और पृच्छक दहिनें भागमें स्थितहोके विषमअक्षर उच्चारण करे तो जय होवे२५४

यदापृछतिचंद्रस्थस्तदासंध्यांनमादिशेत् ॥
पृच्छद्यदातुसूर्यस्यतदाजानीहिविग्रहः ॥ २५५ ॥

अर्थ–जो यदि प्रश्ण समय चंद्रमाका स्वर चलताहोय तो संधि मेल होवे सूर्यके स्वरमें प्रश्ण करे तो विग्रह युद्ध होना कहै ॥ २५५ ॥

पार्थिवेचसमंयुद्धंसिद्धिर्भवतिदारुणे ॥
युद्धेहितेजसीभंगोमृत्युर्वायोनभस्यपि ॥ २५६ ॥

अर्थ–जो यदि पृथ्वीतत्व होय तो बराबरयुद्ध होना कहै जलतत्वमें सिद्धि होवे अग्नितत्वमें अंगभंगआदि होना और वायु तथा आकाशतत्वमें मृत्यु होवे ॥ २५६ ॥

निमित्तकप्रसादाद्धायदानज्ञायतेनिलः ॥
पृच्छाकालेतदाकुर्यादिदंयत्नेनबुद्धिमान् २५७

अर्थ–जो यदि प्रश्णसमय किसी निमित्तसे अथवा प्रमा-

दसे स्वरका निश्चय ज्ञान नहीं होवे तो बुद्धिमान् जन यत-
नसे यह करै ॥ २५७ ॥

निश्चलांधारणांकृत्वापुष्पंहस्तांन्निपातयेत् ॥
पूर्णांगेपुष्पपतनंशून्येचतत्परंभवेत् ॥ २५८ ॥

अर्थ-अचलधारण करके अपनें हाथसें पुष्पको पृथ्वीमें
गिरै पूर्णांग अर्थात् शरीरके सन्मुख पुष्पपडे तो शुभफल
कहै और दूर गिरे तो अशुभ फल जानना ॥ २५८ ॥

तिष्ठंत्युपविशन्वापिप्राणमाकर्णयन्निजं ॥
मनोभंगमकुर्वाणःसर्वकार्येषुजीवति ॥ २५९ ॥

अर्थ-खडा होताहुआ तथा बैठताहुआ अपनें प्राणोंको
एकाग्र मनसे भीतरको खींचताहुआ पुरुष सब कार्योंमें
जीवताहै अर्थात् शुभफलको प्राप्त होताहै ॥ २५९ ॥

नकालोविविधंघोरंनशस्त्रंनचपन्नगाः ॥
नशत्रुव्याधिचौराद्याःशून्यस्थंनाशितुक्षमाः २६०

अर्थ-काल अनेक प्रकारके घोर शस्त्र सर्प शत्रु व्याधि
चोर इत्यादि ये सब शुन्यमें स्थितहुए खालीस्वरवाले पुरु-
षको मारनेंमें समर्थ नहींहै ॥ २६० ॥

जीवेनस्थापयेद्वायुर्जीवेनारंभयेत्पुनः ॥
जीवेनक्रीडतोनित्यंद्यूतंजयतिसर्वथा ॥ २६१ ॥

अर्थ-जीवस्वरसे अर्थात् वहतेहुए स्वरसे वायुको स्थित
करै और जीवसेही वायुका आरंभ करै और जीव स्वरमेंही
क्रीडा जूवाआदिका प्रारंभ करै ऐसा पुरुष जूवामें नित्य
जीतताहै ॥ २६१ ॥

स्वरज्ञानीबलादग्रेनिष्फलंकोटिधाभवेत् ॥
इहलोकेपरत्रापिस्वरज्ञानीबलीसदा ॥ २६२ ॥

अर्थ-स्वरज्ञानीके बलके आगे अन्य किरोडों प्रकारकेभी बल निस्फल होजातेहैं इस लोकमें तथा परलोकमेंभी स्वरज्ञानी पुरुष सदा बली रहताहै ॥ २६२ ॥

दशलक्षायुतंलक्षंदेशाधिपबलंक्वचित् ॥
शतक्रतुसुरेंद्राणांबलंकोटिगुणंभवेत् ॥ २६३ ॥

अर्थ-किसीको दश अथवा सौ किसीको दशहजार किसीको लक्षका बल रहताहै कहीं देशके राज्यका बलहै और इनसेभी किरोड गुना बल इंद्र तथा ब्रह्माआदि अन्य देवताओंके हैं तैसेही स्वरज्ञानीकोभी कोटिगुना बल रहताहै २६३

देव्यु० ॥ परस्परमनुष्याणांयुद्धेप्रोक्तोजयस्तथा ॥
यमयुद्धेसमुत्पन्नेमनुष्याणांकथंजयः ॥ २६४ ॥

अर्थ-पार्वती पूछती है आपनें मनुष्योंके परस्पर युद्धमें तो जय कहा और जब धर्मराजके संग मनुष्यका युद्ध होवे तब किस प्रकार जय होवे ॥ २६४ ॥

ईश्वर० ॥ ध्यायेद्देवंस्थिरोजीवंजुहुयाज्जीवसंगमे ॥
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्यमहालाभोजयस्तथा ॥ २६५ ॥

अर्थ-शिवजी कहते हैं हेपार्वती जो मनुष्य स्थिर स्वस्थ होके देवका ध्यान करे पीछे जीव संगम अर्थात् कुंभक नाडीमें जीव स्वरका होमकरै उस मनुष्यके इष्टकी सिद्धि होती है महालाभ और जयकी प्राप्ति होती है ॥ २६५ ॥

निराकारात्समुत्पन्नंसाकारंसकलंजगत् ॥
तत्साकारंनिराकारंज्ञानेभवतितत्क्षणं ॥ २६६ ॥

अर्थ-निराकार ईश्वरसे संपूर्ण साकार जगत् उत्पन्न भयाहै सो वह साकार जगत् ईश्वरके ज्ञान होनेही तिसी क्षणमें निराकार होताहै अर्थात् संसारबंधनसे छूटताहै २६६

देव्यु० ॥ नरयुद्धंयमयुद्धंत्वयाप्रोक्तंमहेश्वर ॥
इदानींदेवदेवानांवशीकरणकंवद ॥ २६७ ॥

अर्थ–श्रीपार्वती बोली हे महादेवजी आपने मनुष्य युद्ध तथा यमयुद्धभी कहा अब देवताओंके देवोंकाभी उत्तम वशीकरण कहो ॥ २६७ ॥

ईश्वर० ॥ चंद्रसूर्येणचारुष्यस्थापयेज्जीवमंडलं ॥
आजन्मवशगारामाकथितेयंतपोधनैः ॥ २६८॥

अर्थ–शिवजी कहते हैं स्त्रीके चंद्रस्वरको अपनें सूर्यस्वर करके आकर्षण कर पीछे उसस्वरको जीव मंडलमें स्थित रखे तो जन्मभर पुरुषके वशमें स्त्री रहती है ऐसे तपस्वी लोगोंनें कहाहै ॥ २६८ ॥

जीवेनगृह्यतेजीवोजीवोजीवस्यदीयते ॥
जीवस्थानेगतोजीवोबालाजीवांतकारकः २६९

अर्थ–जो पुरुष अपने जीव स्वर अर्थात् चलतेहुये स्वरसे स्त्रीके जीव स्वरको ग्रहण करै और अपनें जीव स्वरको स्त्रीके जीवस्वरमें देवे ऐसे जीव स्थानमें प्राप्तहुआ जीव स्वर स्त्रीके जीवको वशमें करताहै ॥ २६९ ॥

रात्र्यांतयामवेलायांप्रसुप्तेकामिनीजने ॥
ब्रह्मजीवंपिवेद्यस्तुबालाप्राणहरोनरः ॥ २७० ॥

अर्थ–रात्रीके पिछले प्रहरमें जबकि स्त्री सोती होवे तब जो मनुष्य स्त्रीके ब्रह्मस्वर, सुषुम्नास्वरको अपने स्वरसे पीताहै वह स्त्रियोंके प्राणोंको वशमें कर लेताहै ॥ २७० ॥

अष्टाक्षरंजपित्वातुतस्मिन्कालेक्रमेसति ॥
तत्क्षणंदीयतेचंद्रोमोहमायातिकामिनी ॥ २७१

अर्थ-फिर वह कालव्यतीत हो लेवे तब अष्टाक्षर मंत्रको जपके तिसी क्षणमें अपना चंद्रस्वरको जो स्त्रीको देताहै उसके वशमें कामिनी होजाती है ॥ २७१ ॥

शयनेवाप्रसंगेवायुवत्यालिंगनेपिवा ॥
यत्सूर्येणपिबेच्चंद्रःसभवेन्मकरध्वजः ॥ २७२ ॥

अर्थ-शयनमें अथवा रतिसमय अथवा स्त्रीके आलिंगन समय जो पुरुष अपनें सूर्यस्वर करके स्त्रीके चंद्रस्वरको पीताहै वह कामदेवके समान स्त्रियोंको प्रिय होताहै॥ २७२ ॥

शिवोवालिंगतेशक्त्याप्रसंगेदक्षिणेपिवा ॥
तत्क्षणादापयेद्यस्तुमोहयेत्कामिनीशतं ॥ २७३

अर्थ-जो यदि रतिसमय शिव, सूर्यस्वर पुरुषका हो स्त्रीका शक्ति चंद्रस्वर होवे ऐसे दोनुवोंका स्वर मिलजाय अथवा स्त्रीके दहिनें स्वरमें अपनें चंद्रस्वरको प्रविष्ट करे ऐसा पुरुष सौ स्त्रियोंको तिसी क्षणमें मोह लेताहै ॥ २७३ ॥

सप्तनवत्रयःपंचवारात्संगस्तुसूर्यगे ॥
चंद्रेद्वितूर्यषट्कृत्वावश्याभवतिकामिनी॥२७४॥

अर्थ-स्त्रीके सूर्यस्वरमें अपनें चंद्रस्वरको दियें पीछे जो सात वा नव तथा तीनवा पांचवार संग करै और स्त्रीके चंद्रस्वरमें अपनें सूर्यस्वरको करके दो चार छह वार संग करनेंसे स्त्री वशमें हो जाती है ॥ २७४ ॥

सूर्यचंद्रौसमाकृष्यसूर्याक्रांत्याधरोष्ठयोः ॥
कामिन्यास्तुमुखंस्पृष्ट्वावारंवारमिदंचरेत् ॥ २७५

अर्थ-अपने सूर्य तथा चंद्र स्वरको सर्पकी चालकी तरंह आकर्षण कर अपनें मुखसे स्त्रीके मुखको अधरोष्ठोपर स्पर्श-

कर वारंवार इस आचरणको करै अर्थात् पूर्वोक्त प्रकारसे चंद्र और सूर्य स्वरका मेल करै ॥ २७५ ॥

आप्राणमितियमस्यया वन्निद्रावशंगता ॥
पश्चाज्जागृतवेलायांचोष्यतेगल्यचक्षुषी ॥ २७६

अर्थ-जबतक स्त्री निद्राके वशमें रहै तबतक उसके मुख पद्मका चुंबन करता रहै और जाय उठे उस समय नेत्र वा गलेका चुंबन करै ॥ २७६

अनेनविधिनाकामीवशयेत्सर्वकामिनी ॥
इदंनवाच्यमन्यस्मिन्नित्याज्ञापरमेश्वरी ॥ २७७॥

इतिवशीवकःप्रकरण ॥

अर्थ-इस विधिसे कामीपुरुष सब स्त्रियोंको वशमें करै हे परमेश्वरि यह वशीकारण किसीके आगे न कहना यह मेरी नित्य आज्ञा है ॥ २७७ ॥

॥ अथगर्भप्रकरणं ॥

ऋतुकालेभवेन्नारीपंचमेन्हियदाभवेत् ॥
सूर्यचंद्रमसोयोगेसेवनात्पुत्रसंभवः ॥ २७८ ॥

अर्थ-स्त्रीको ऋतुकाल, रजस्वला हुए पीछे जब पांचवा दिन आवे तब स्त्रीका चंद्र, बायांस्वर चलताहो और पुरुषका दहिना सूर्यस्वर चलताहो तब रतिकरनेसे पुत्र उत्पन्न होताहै ॥ २७८ ॥

शंखवल्लीगवांदुग्धंपृथ्व्यापोवहतेयदा ॥
ऋतुस्नातापिबेन्नारीऋतुदानंतुयोजयेत्॥२७९॥

अर्थ-जिस समय ऋतुकालमें पृथ्वी और जलतत्व वहताहो तब स्त्री ऋतुस्नान करके गौके दूधमें शंखवल्लीको पीवे पीछे पुरुष ऋतुदानदे वे भोग करै ॥ २७९ ॥

भर्तुरग्रेवदेद्वाक्यंभोगंदेहित्रिभिर्वचः ॥
रूपलावण्यसंपन्नोनरसिंहप्रसूयते ॥ २८० ॥

अर्थ–तहां भोगसमय स्त्री अपनें भर्तारसे तीन वार भोग मागनेंका वचन कहे ऐसे करनेंसें रूप लावण्यसंयुक्त मनुष्योंमें सिंहसरीखा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न होताहै ॥ २८० ॥

सुषुम्णासूर्यवाहेनऋतुदानंतुयोजये ॥
अंगहीनःपुमान्यस्तुजायतेत्रासविग्रहः ॥२८१॥

अर्थ–जो मनुष्य सुषुम्णानाडीमें सूर्यके प्रवाहमें स्त्रीसंग करताहै उसके अंगहीन बुरेरूपवाला पुत्र उत्पन्न होताहै२८१

विषमांकेदिवारात्रोविषमांकेदिवाधिपः ॥
चंद्रतोषाग्नितत्वेषुवंध्यापुत्रमवाप्नुयात् ॥ २८३ ॥

अर्थ–ऋतुसमयके अनंत पांचआदि विषम दिनोंमें दिनमें अथवा रात्रीमें पुरुषका सूर्यस्वर चले और स्त्रीका चंद्रस्वरमें जल वा अग्नितत्व चलता होवे तब स्त्रीसंग करनेंसें वंध्याभी पुत्रको प्राप्त होती है ॥ २८२ ॥

ऋत्वारंभेरविःपुंसांस्त्रयीचैवसुधाकरः ॥
उभयोःसंगमेप्राप्तेवंध्यापुत्रमवाप्नुयात् ॥ २८३ ॥

अर्थ–ऋतुसमयमें पुरुषोंका सूर्यस्वर होवे और स्त्रियोंको चंद्रस्वरहोवे तब दोनुवोंके संगम होनेंसे वंध्यास्त्रीभी पुत्रको प्राप्त होतीहै ॥ २८३ ॥

ऋत्वारंभेरविःपुंसांशुक्रांतेचसुधाकरः ॥
अनेनक्रमयोगेननादत्तेकामिनीतदा ॥ २८४ ॥

अर्थ–जो यदि स्त्रीसंग करतेहुए तो पुरुषका सूर्यस्वर चलता होवे और वीर्यपातके समय चंद्रस्वर चलनें लगजावे

तब इस क्रमयोगसे स्त्री गर्भको ग्रहण नहीं करतीहै ॥ २८४ ॥

चंद्रनाडीयदाप्रश्नेगर्भेकन्यातदाभवेत् ॥
सूर्योवहेत्तदापुत्रोद्वयोर्गर्भोविहन्यते ॥ २८५ ॥

अर्थ-जो कोई चंद्रस्वर चलतेहुए गर्भका प्रश्न करे उसके कन्या होती बतलावे सूर्यस्वर चलता होय तो पुरुष और दोनोस्वर सुषुम्णानाडी चलती होवे तो गर्भपात होना कहै ॥ २८५ ॥

चंद्रेस्त्रीपुरुषःसूर्येमध्यमार्गेनपुंसकः ॥
गर्भप्रश्नेतदादूतःपूर्णेपुत्रःप्रजायते ॥ २८६ ॥

अर्थ-प्रश्नसमय चंद्रस्वर चलता होय तो कन्या और सूर्यस्वर चलता होय तो पुत्र दोनों स्वर चलते होवे तो नपुंसक पैदा होता है परंतु जो यदि पूछनेवाला दूत पूर्ण, जौनसास्वर चलता हो उसी हाथकीतर्फ आयके बैठा हो तो पुत्र पैदा होवे ॥ २८६ ॥

पृथ्वीपुत्रीजलेपुत्रःकन्यकातुप्रभंजने ॥
तेजसागर्भपातस्यान्नभसापिनपुंसकः ॥ २८७ ॥

अर्थ-पृथ्वीतत्व चलता होवे तो पुत्रि और जलतत्व चलताहो तो पुत्र पैदा होवे और वायुतत्त्व चलता होवे तो कन्या अग्नितत्त्वमें गर्भपात और आकाशतत्त्वमें नपुंसक जानना ॥ २८७ ॥

शून्येशून्यंयुगेयुग्मंगर्भपातश्चसंक्रमे ॥
तत्वविद्भिस्समाख्यातमेवंज्ञेयंचसुंदरि ॥ २८८ ॥

अर्थ-हे सुंदरी शून्यस्वरमें शून्य और दो २ स्वर वहते होवे तो योग्य जोडा सुषुम्णानाडी वहती होतो गर्भपात ऐसे तत्त्ववेत्ताजनोंनें कहाहै ॥ २८८ ॥

गर्भाधानंमारुतेस्याद्दुःखीविख्यातोवावारुणे सौख्ययुक्तः ॥ गर्भस्रावीस्वल्पजीवीचवन्हौभोगी भव्योपार्थिवेनार्थयुक्तः ॥ २८९ ॥

अर्थ-जो यदि वायुतत्वमें गर्भाधान होवे तो दुःखवाला पुत्र होवे जलतत्वमें द्रिशाओंमें विख्यात और सुखसेयुक्त होताहै अग्नितत्वमें गर्भाधान होवे तो गर्भपात हो अथवा स्वल्प आयुवाला होवे पृथ्वीतत्वमें हो तो द्रव्य और भोग आदिसे युक्त रहनेवाला होवे ॥ २८९ ॥

धनवान्सौख्ययुक्तस्यभोगवानर्थसंस्थितिः ॥ स्यान्नित्यंवारुणेतत्वेव्योम्निगर्भेविनश्यति ॥२९०

अर्थ-जलतत्वमें जो गर्भाधान हुआ हो वह बालक धनवान् सुखी भोगयुक्त होताहै और जो आकाशतत्वमें गर्भाधान हुआ हो वह गर्भ नष्ट हो जाताहै ॥ २९० ॥

माहेंद्रेसुसुतोत्पत्तिःवारुणेदुहिताभवेत् ॥ शेषेतुगर्भहानिस्याज्जातमात्रस्यवामृतिः ॥२९१॥

अर्थ-पृथ्वीतत्वमें गर्भाधान हो तो पुत्र उत्पन्न होवे जलतत्वमें कन्या और अन्य तत्वोंमें गर्भकी हानि होतीहै अथवा जन्मतेही मर जाताहै ॥ २९१ ॥

रविमध्येगतश्चंद्रश्चंद्रमध्येगतोरविः ॥ ज्ञातव्यंगुरुतःशीघ्रंनवेद्यंशास्त्रकोटिभिः ॥२९२॥

अर्थ-सूर्यस्वरमें चंद्रमाकी गति करनी और चंद्रस्वरमें सूर्यकी गति गुरुसे शीघ्रही सीखनी चाहिये यह बात किरोडों शास्त्रोंमें नहीं आती है ॥ २९२ ॥ इति गर्भप्रकरणम् ॥

अथ संवत्सर प्रकरणम् ।

चैत्रशुक्लप्रतिपदिप्रातस्तत्त्वविभेदतः ॥

पश्येद्विचक्षणोयोगीदक्षिणेउत्तरायणे ॥ २९३ ॥

अर्थ–चैत्रशुक्लपक्षकी प्रतिपदाको प्रातःकालसमय तत्वों-के भेदसे पंडितजन दक्षिणायन उत्तरायनको देखै अर्थात् वर्षदिनके हालको विचारै ॥ २९३ ॥

चंद्रोदयस्यवेलायांवहमानाथतावतः ॥
पृथिव्यापस्तथावायुःसुभिक्षंसर्वसस्यजं ॥२९४॥

अर्थ–जो यदि उससमय चंद्रस्वरमें पृथ्वी तत्व चलता हो अथवा जल तथा वायुतत्व चलता होय तो सुभिक्ष होवे संपूर्ण खेतीयां निपजै ॥ २९४ ॥

तेजोव्योम्निभयंघोरंदुर्भिक्षंकालतत्वतः ॥
एवंतत्वंकालज्ञेयंसर्वेमासेदिनेतथा ॥ २९५ ॥

अर्थ–अग्नि वा आकाशतत्व होवे तो घोर भह होय दु-र्भिक्ष होय ऐसेही वर्षमें तथा मास प्रवेशमें वा दिनमें तत्वोंके अनुसार फलोंको जानें ॥ २९५ ॥

मध्यमाभवतिक्रूरादुष्टासर्वत्रकर्मसु ॥
देशभंगमहारोगाःक्लेशकष्टादिदुःखदा॥ २९६ ॥

अर्थ–मध्यमा सुषुम्णानाडी क्रूर है सब कर्मोमें दुष्ट है देश-भंग महारोग क्लेश कष्ट इत्यादिक दुःखोंको देनेवाली है २९६

मेषसंक्रांतिवेलायांस्वरभेदंविचारयेत् ॥
संवत्सरफलंब्रूयातलोकानांहितकाम्यया ॥२९७

अर्थ–और मेषसंक्रांतिके अर्क समयभी स्वरोंके भेद वि-चारे फिर लोगोंके हितकेवास्ते संवत्सरके फलको कहै२९७

पृथिव्यादिकतत्वेनदिनमासादिजंफलं ॥
शोभनंचतथादुष्टंव्योममारुतवन्हिभिः ॥ २९८ ॥

अर्थ-पृथ्वी आदि तत्वों मेसे महीने दिन आदि संपूर्ण वर्षका फल शुभ जाने और आकाश वायु अग्नि इन तत्वोंमें दुष्ट फल जानें ॥ २९८ ॥

सुभिक्षंराष्ट्रवृद्धिस्याद्बहुसस्यावसुंधरा ॥
बहुवृष्टिस्तथासौख्यंपृथ्वीतत्वंवहेद्यदि ॥ २९९ ॥

अर्थ-जो यदि पृथ्वीतत्व वहता होवे तो सुभिक्ष हो राज्यकी वृद्धि हो पृथ्वी पै बहुतसी खेती निपजै बहुतसी वर्षा और सुख होवे ॥ २९९ ॥

अतिवृष्टिसुभिक्षंस्यादारोग्यंसौख्यमेवच ॥
बहुसस्यंतथापृथ्वीआपतत्वंवहेद्यदि ॥ ३०० ॥

अर्थ-जलतत्व वहता हो तो अतिवर्षा होवे सुभीक्ष होय आरोग्य सुख होवे पृथ्वीपै बहुत धान्य निपजै ॥ ३०० ॥

दुर्भिक्षंराष्ट्रभंगंस्यादुत्पत्तिश्चविनश्यति ॥
अल्पाद्यल्पतरावृष्टिरग्नितत्वंवहेद्यदि ॥ ३०१ ॥

अर्थ-अग्नितत्व बहता होय तो दुर्भिक्ष हो राज्यभंग होवे उत्पन्न हुएकानाश बहुत थोडी वर्षा यह हाल होताहै ॥३०१॥

उत्पातोपद्रवाभीतिअल्पवृष्टिस्तुरीतयः ॥
मेषसंक्रांतिवेलायांव्योमतत्वंभवेद्यदि॥ ३०२ ॥
तत्रापिन्यूनताज्ञेयासस्यादीनांसुखस्यच॥३०३॥

अर्थ-जो यदि मेषसंक्रांतिके अर्क समय आकाशतत्व वहता होवे तो उत्पात उपद्रव भय स्वल्प वर्षा इति अर्थात् तीडीमूंसे लगने आदि छह विकार ये होते हैं और जो आकाशतत्व वहता हो तोभी उस वर्षमें खेतीआदिकोंका और सुखका अभाव जानना ॥ ३०२ ॥ ३०३ ॥

पूर्णप्रवेशनेश्वासेसुखंतत्वेनसिद्धिदा ॥
सूर्यचंद्रेन्यथाभूतेसंग्रहःसर्वसिध्यतिः ॥ ३०४ ॥

अर्थ–पूर्णस्वर चलता होय तो तत्वोंके क्रमसे सस्यकी धान्यकी सिद्धि जानना और सूर्यका स्वरमें चंद्रमा तथा चंद्रमाके स्वरमें सूर्य ऐसे बिपरीत चलनें लगजावें तो अन्नका संग्रह करनेंमें लाभ होताहै ॥ ३०४ ॥

विषमेवन्हितत्वेचेतज्ञायतेकेवलंनभः ॥
तत्कुर्याद्वस्तुसंग्राहोद्विमासेचमहर्घता ॥ ३०५ ॥

अर्थ–जो यदि विषम अर्थात् सूर्यस्वरमें अग्नितत्व अथवा केवल आकाशतत्व चलता होवे तो अन्नआदि वस्तुओंका संग्रह करना दो महींनोंमें मंहगी होवेंगी ॥ ३०५ ॥

रात्रोसंक्रमतेसूर्यश्चंद्रमंतेप्रसर्प्पति ॥
खानिलेवन्हियोगोपिरौरवंजगतीतले ॥३०६॥

॥ इति संवत्सरप्ररकर्णं ॥

अर्थ–जो यदि रात्रीको संक्रांतिअर्क होय तब सूर्यस्वर चलताहो और प्रातःकाल चंद्रस्वर चलताहो और इनमें आकाश वायु अग्नि ये तत्व वहते होवें तो पृथ्वीतलमें रौरव महादुःख अनर्थ होवें ॥ ३०६ ॥ इति संवत्सर प्रकरणम् ॥

॥ अथरोगप्रकरणं ॥

महीतत्वेस्वरोगंचजलेचजलमातरः ॥
तेजसिग्रामवाटीस्थशाकिनीपितृदोषतः॥३०७॥

अर्थ–प्रश्न समय जो पृथ्वीतत्व चलता होवे तो उसकी प्रारब्धका रोग कहना जलतत्व वहता होवे तो जलकी मातृका देवता ओंका दोष जानना अग्नितत्व चलता होवे तो

ग्राम पर्वत आदिमें रहनेंवाली शाकिनी अथवा पितरोंका दोष बताना ॥ ३०७ ॥

आदौशून्यगतोदूतःपश्चात्पूर्णोविशेद्यादि ॥
मूर्छितेपिध्रुवंजीवेद्यदर्थंपरिपृच्छति ॥ ३०८ ॥

अर्थ-जो यदि पूछनेंवाला दूत पहले तो स्वर न चलता हो उस शून्य अंगकी तर्फ आय बैठा हो पीछे पूर्ण अंगकी तर्फ बैठे तो जिस रोगीका प्रश्ण किया हो वह मूर्छित हुआभी रोगी जीवताहै ॥ ३०८ ॥

यस्मिन्नंगेस्थितोजीवः तत्रस्थःपरिपृच्छति ॥
तदाजीवतिजीवोसौयदिरोगैरुपद्रुतः ॥ ३०९ ॥

अर्थ-जो यदि जिस अंगमें जीवस्वर स्थित हो उसी अंगकी तर्फ बैठके पूछे तोभी सेकडों रोग उपद्रवोंसे युक्त हुआभी रोगी जीवताहै ॥ ३०९ ॥

दक्षिणेनयदावायुर्दूतोरौद्राक्षरोवदेत् ॥
तदाजीवतिजीवेसौचंद्रेसमफलंभवेत् ॥ ३१० ॥

अर्थ-जो यदि दहिनास्वर चलता हो और दूत भयानक वचन बोले तो वह रोगी जीवेगा और चंद्रस्वर हो तोभी समान फल कहै ॥ ३१० ॥

जीवाकारंचवाधृत्वाजीवाकारंविलोक्यच ॥
जीवस्थोजीवितप्रश्नेतस्यस्याज्जीवितंफलं ॥३११

अर्थ-अथवा जोदूत जीवाकारको धारण करके और जीवाकारको देखकर जीवमें स्थित हुआ प्रश्ण करे तो उसको जीवनेंका फल कहै ॥ ३११ ॥

वामस्वरेतदादक्षःप्रवेशोयत्रवाहने ॥
तत्रस्थंपृच्छतेदूतःतस्यासिद्धिर्नसंशयः ॥ ३१२॥

अर्थ-वामास्वर अथवा दाहिनास्वर जो भीतरको प्रवेश होते समय जो दूत प्रश्ण करै तो उस रोगीका आच्छाहोना जानना ॥ ३१२ ॥

प्रश्नेचाधःस्थितोजीवोनूनंजीवोहिजीवति ॥
उर्ध्वचारःस्थितोजीवोजीवोयातियमालयं ३१३

अर्थ-प्रश्ण समय स्वर नीचेको चलता हो तो अवश्य रोगी जीवताहै और स्वर ऊपरको संचारवाला होवे तो वह रोगी निश्चय धर्मराजके स्थानमें प्राप्त होताहै ॥ ३१३ ॥

विपरीताक्षरंप्रश्नेरिक्तायांपृच्छकोयदि ॥
विपर्ययंचविज्ञेयंविषमप्योदयेसति ॥ ३१४ ॥

अर्थ-जो यदि दूत प्रश्ण समय विपरीत अक्षर उच्चारणा करे और पूछनेंवाला रिक्तनाडीकी तर्फ स्थित हो और विषम सुषुम्णानाडीका प्रवाह होवे तो विपरीत फल जानना ३१४

चंद्रस्थानेस्थितोजीवःसूर्यस्थानेचपृच्छकः ॥
तदाप्राणविमुक्तोसौयदिवैद्यशतैर्वृतः ॥ ३१५ ॥

अर्थ-जो यदि अपना जीव प्राणवायु चंद्रमाके स्थानमें होवे और पृच्छकका सूर्य स्थानमें होवे तो सेंकडों वैद्योंसे युक्त हुआभी रोगी नहीं जीवता ॥ ३१५ ॥

पिंगलायास्थितोजीवेवामेदूतस्तुपृच्छति ॥
तदापिमृयतेरोगीयदित्रातामहेश्वरः ॥ ३१६ ॥

अर्थ-जो यदि पिंगलास्वर चलता हो और दूत वामें भागमें बैठा होवे तो शिवजी रक्षा करनेंवाला होय तोभी रोगी मरताहै ॥ ३१६ ॥

एकस्यभूतस्यविपर्ययेणरोगाभिभूतिर्भवतीहपुं

सां ॥ तयोर्द्वयोर्बंधुसुहृद्विपत्तिःपक्षद्वयेव्यत्यय तोमृतिस्यात् ॥ ३१७ ॥

अर्थ-एक तत्वके विपरीत होनेंसे पुरुषोंको रोग त्रास देताहै और दो तत्वोंके विपरीत होनेंसे बंधु मित्रोंकी विपत्ति होती है और एक महीनातक विपरीत तत्त्व रहें तों मृत्यु होती है ॥ ३१७ ॥ ॥ इति रोग प्रकरणम् ॥

॥ अथकालज्ञानं ॥

मासादौवत्सरादौचपक्षादौचयथाक्रमं ॥
क्षयकालंपरीक्षेतवायुचारवशात्सुधीः ॥ ३१८ ॥

अर्थ-पंडितजन महीनेकी आदिमें पक्षकी वर्षकी आदिमें क्रमसे स्वरचारके वशसे मरण समयकी परीक्षा करै ॥३१८॥

पंचभूतात्मकंदीपंशिवस्नेहेनसिंचितं ॥
रक्षेतसूर्यवातेनतेनजीवस्थिरोभवेत् ॥ ३१९ ॥

अर्थ-यह पंचभूतात्मक दीप देह शिवरूपी श्वासरूपी तेलसे सींचाहुआहै इसको सूर्यस्वर वायुसे जो रक्षित करताहै वह प्राणी स्थिर हुआ जीवताहै ॥ ३१९ ॥

मारुतंबंधयित्वातुसूर्यबंधयतेयदि ॥
अभ्यासाज्जीवतेजीवऽसूर्यकालेपिवंचिते ॥३२०

अर्थ-जो यदि प्राणवायुको बंधकरके दिनभर सूर्यस्वरके बंद करताहै ऐसे अभ्याससे सूर्य कालको टालनेंवाला वह योगी बहुत कालतक जीवताहै ॥ ३२० ॥

गगनात्स्रवतेचंद्रःकायापद्मानिसिंचयेत् ॥
कर्मयोगसदाभ्यासैरमरःशशिसंश्रयात् ॥३२१॥

अर्थ-ऐसे अभ्यासवाले योगीके चंद्रमा गगन अर्थात्

मस्तक मांहसे अमृतको गिराताहै फिर शरीररूपी कम-
लोंको सींचताहै ऐसे कर्मयोगके अभ्याससे चंद्रमाके आश्रय
होनेसे योगी अमर होताहै ॥ ३२१ ॥

शशांकंवारयेद्रात्रौदिवावार्योदिवाकरः ॥
इत्यभ्यासरतोनित्यंसयोगीनात्रसंशयः ॥३२२॥

अर्थ-जो रात्रीमें चंद्रस्वरको निवारण करताहै और दिनमें
सूर्यस्वरके निवारण करताहै ऐसे अभ्यासवाला जन उत्तम
योगी है इसमें संदेह नहीं ॥ ३२२ ॥

अहोरात्रेयदैकत्रवहतेयस्यमारुतः ॥
तदातस्यभवेन्मृत्युःसंपूर्णेवत्सरत्रये ॥ ३२३ ॥

अर्थ-जिस पुरुषका श्वास राति दिन एकस्वरमेही चल-
ता हो तो उसका मृत्यु तीन वर्षमें होवे ॥ ३२३ ॥

अहोरात्रेद्वयंयस्यपिंगलायांसदागतिः ॥
तस्यवर्षद्वयंप्रोक्तंजीवितंतत्ववेदिभिः ॥ ३२४ ॥

अर्थ-जिस पुरुषका श्वास दो दिनतक पिंगलानाडीमें
रहै उसकी आयु तत्ववेत्ता जनोंनें दो वर्षकी कहीहै॥३२४॥

त्रिरात्रेवहतेयस्यवायुरेकपुटेस्थितः ॥
तदासंवत्सरायुष्यंप्रवदंतिमनीषिणः ॥ ३२५ ॥

अर्थ-तीन रात्रीतक जिसकी वायु एकही नासिकापुटमें
वहै उसकी एक वर्षकी आयु पंडितजन कहतेहैं ॥ ३२५ ॥

रात्रौचंद्रोदिवासूर्योवहेयस्यानिरंतरं ॥
जानीयात्तस्यवैमृत्युःषण्मासाभ्यंतरेभवेत् ॥३२६

अर्थ-जिसके निरंतर रात्रीमें चंद्रस्वर चले और दिनमें
सूर्यस्वर चले उसकी छह महीनों भीतर मृत्यु जाननी३२६

लक्षंलक्षतिलक्षणेनसलिलंभानुर्यदादृश्यतेक्षीणे
दक्षिणपश्चिमोत्तरपुरःषद्त्रिद्विमासैकृतः ॥
मध्येछिद्रमिदंभवेद्दशदिनंधूमाकुलंतद्दिनेसर्व
ज्ञैरपिभाषितंमुनिवरैराःयुप्रमाणंस्फुटं ॥ ३२७ ॥

अर्थ–कांसेके पात्रमें डालेहुऐ जलमें सूर्यका बिंब दिखानेंकी विधि कहतेहैं–जिसको सूर्यका बिंब जलमे दक्षिण, पश्चिम, उत्तर पूर्व इन दिशाओंमें खंडित हुआ दीखे तो क्रमसे छह तीन दो एक महीनोंमें उसकी मृत्यु होतीहै और दित सूर्यबिंब के मध्यमें छिद्र दीखे तो दश दिनमेंमृत्यु हो धूमांसे आच्छा दित दीखे तो उसी दिन मृत्यु होवें ऐसे सर्व मुनिजनोंनें आयुका प्रमाण स्फुट कहा है ॥ ३२७ ॥

दूतोरक्तकषायकृष्णवसनोदंतक्षतोमुंडितोतैला
भ्यक्तशरीररज्जुककरीदीनश्चपूर्णाननः ॥ भस्मां
गारकपालपांशुमुसलीसूर्यास्तमायातियःशून्य
श्वासदिशिस्थितोगदयुतःकालानलःस्यादसौ ॥

अर्थ–जो यदि रोगीके प्रश्ण करनेंवाला दूत लाल, कपाय काले वस्त्र पहिनें हुए हो अथवा टूटे हुए दांतोवाला मुंडन करायें हुए तेल लगायें हुएहो अथवा हाथमें रस्सी ले रहा है दीन तथा जुवाबदेनेंमें निपुण भस्म अंगार कपाल मूसल इनको ले रहा हो सूर्यअस्त होनेंके समय आवे और जो नसा स्वर न चलता हो उसतर्फ आयके बैठे रोगयुक्त ऐसा यह दूत काल अग्निके समान है ॥ ३२८ ॥

अकस्माच्चित्तविकृतिरकस्मात्पुरुषोत्तमः ॥
अकस्मादिंद्रियोत्पातःसंन्निपाताग्रलक्षणं॥ ३२९

अर्थ-जिस रोगीका अचानक चित्त बिगड जाय और अचानकसेही उत्तम पुरुष हो जाय अचानकही जिसके इंद्रियोंमें उत्पात हो तिसकै संन्निपातके पूर्वरूप लक्षण जानना ॥ ३२९ ॥

शरीरंशीतलंयस्यप्रकृतिर्विकृतीभवेत् ॥
तदारिष्टंसमासेनव्यासक्तस्तुनिबोधमे ॥ ३३० ॥

अर्थ-जिसका शरीर शीतल होवे और स्वभाव बिगड जावे वह संक्षेपसे हुआ अरिष्ट विस्तार पूर्वक मुजसे सुनो३३०

दुष्टशद्वेषुरमतेशुद्धशद्वेषुचाप्यति ॥
पश्चात्तापोभवेद्यस्यतस्यमृत्युर्नसंशयः ॥ ३३१ ॥

अर्थ-जो पुरुष दुष्ट खोटे २ शब्द कहै और शुद्ध, अच्छे शब्दभी कहै पश्चाताप करै ऐसा पुरुषकी मृत्यु होतीहै इसमें संदेह नहीं है ॥ ३३१ ॥

हुंकारःशीतलोयस्यफूत्कारोवन्हिसंनिभः ॥
महादाहोभवेद्यस्यतस्यमृत्युर्भवेतध्रुवं ॥ ३३२ ॥

अर्थ-जिसका हुंकार ठंढा होय और फुत्कार अग्निके समानं हो उसकै महान् वैद्य रक्षा करनेंवाला हो तोभी निश्चय उसकी मृत्यु होतीहै ॥ ३३२ ॥

जिव्हांविष्णुपदंध्रुवंसुरपदंसन्मातृकामंडलमेता
न्येवमरुंधतीममृतगुंशुक्रंध्रुवंवाक्षणम् ॥ एतेष्वे
कमपिस्फूटंनपुरुषःपश्यत्पुरःप्रेषितःसोऽवश्यंविश
तीहकालवदनंसंवत्सराद्धूर्ध्वतः ॥ ३३३ ॥

अर्थ-जोपुरुष जिव्हा आकाश ध्रुग, देवतोंका मार्ग मातृका मंडल अरुंधती चंद्रमा, शुक्र अगस्ति इनमांहसे एकको

कष्टसेभी नहीं देखे वह रोगी बर्ष दिनके अनंतर निश्चय मृत्युको प्राप्त होताहै ॥ ३३३ ॥

अरश्मिबिंबंसूर्यस्यवन्हेःशीतांशुमालिनः ॥
दृष्ट्वैकादशमासायुर्निश्चितोर्ध्वंनजीवति ॥३३४॥

अर्थ-जिस पुरुषको सूर्य चंद्रमाके बिंबकी किरण न दिखे और अग्निकोभी तेजरहित देखे ऐसा पुरुष ग्यारहमहीनें पीछे नहीं जीवता है ॥ ३३४ ॥

वाप्यांपुरीषमूत्रेयःसुवर्णरजतंतथा ॥
प्रत्यक्षमथवास्वप्नेदशमासंनजीवति ॥ ३३५ ॥

अर्थ-जो मनुष्य सुपनेंमें अथवा जाग्रत अवस्थामें बावडीमें मलमूत्र चांदी सुवर्ण इनको देखे वह दश महीनेके अनंतर नहीं जीवता है ॥ ३३५ ॥

क्वचित्पश्यतियोदीपंसुवर्णश्याममेववा ॥
विपरीतानिभूतानिनवमासंनजीवति ॥ ३३६ ॥

अर्थ-जो मनुष्य दीपकको कभी तो सुवर्ण सरीखा कांतिवाला देखे कभी कृष्णवर्ण देखे सब भूतोंको विपरीत देखे वह नव महीनेतक नहीं जीवता है ॥ ३३६ ॥

स्थूलांगोपिकृशःकृशोपिसहसास्थूलत्वमालंबते
प्राप्तोवाकनकप्रभांयदिभवेत्रोगोपिकृष्णच्छवि ॥
शूरोभीरुसुधीरधर्मनिपुणःशांतोविकारीपुमा
नित्येवंप्रकृतीरुशंतिचलनंमासाष्टमेसुंदरि॥३३७

अर्थ-जिस मनुष्यकी प्रकृति ऐसे चलायमान हो जावे की स्थूल अंगवालाभी कभी माडा हो जावे माडा अंगवाला कभी स्थूल हो जावे और जो क्रूर तथा कृष्णवर्णवाला हो वहभी रोगी अचानक सुवर्ण सरीखे वर्णवाला हो जावे

कभी शूर वीर होके डरपोक हो जावे और सुंदर धीरजवाला धार्मिक शांत हो फिर विकारवान् हो जाय ऐसा वह पुरुष आठ महीनोंतक जीवता है ॥ ३३७ ॥

पीडाभवेत्पाणितलेचजिव्हामूलंसमूलंरुधिरंचकृष्णा ॥ विद्धेनचग्लायतियत्रदृष्टयाजीवेन्मनुष्यः सहिसप्तमासान् ॥ ३३८ ॥

अर्थ-जिस पुरुषकी हथेलीमें और जिव्हाके मूलमें पीड होवे रुधिर कालाहोजाय और जिसके शरीरमें सूई आदिच भोंनेंकी पीडा नहीं मालूम होवे ऐसा मनुष्य सातही महीनोंतक जीवता है ॥ ३३८ ॥

मध्यांगुलीनांत्रितयंनवक्रंरोगंविनाशुष्यति यस्यकंठः॥मुहुर्मुहुःप्रश्नवशेनजाड्यात्षड्भिः समासैःप्रलयंप्रयाति ॥ ३३९ ॥

अर्थ-जिसका मध्यकी तीन अंगुली मुडें नहीं रोगके बिनाही जिसका कंठ सुखजावे और वारंवार पूछी हुई बातसे जडता कछु स्मरण नहीं रहै ऐसा पुरुष छह महीनोंमें मर जाताहै ॥ ३३९ ॥

नयस्यस्मरणंकिंचिद्विद्यतेस्तनचर्मणि ॥
सोवश्यंपंचमेमासिस्कंधारुढोभविष्यति ॥ ३४० ॥

अर्थ-जिस पुरुषकी स्तनोंकी त्वचा बधिर होजावे वह निश्चय पांच महीनोंतक स्कंधारूढ होगा अर्थात् मरेगा ३४०

यस्यनस्फुरतेज्योतिःपीडितेनयनद्वये ॥
मरणंयस्यनिर्दिष्टंचतुर्थेमासिनिश्चितं ॥ ३४१ ॥

अर्थ-जिस पुरुषकी आंखोंकी ज्योति प्रकाश न हो और दोनों नेत्रोंमें पीडा रहै वह अवश्य चौथे महीनेंमें मरेगा यह जानो ॥ ३४१ ॥

दंताश्ववृषणौयस्यनकिंचिदपिपीडचते ॥
तृतीयेमासिसोवश्यंयमलोकंगमिष्यति ॥३४२॥

अर्थ–जिसके दांत और वृषण दाबनेंसे पीडीत न हो बधिर होजावे ऐसा वह पुरुष तीन महीनोंमें मरताहै ॥ ३४२ ॥

तारागणंपश्यतियोविरूपांयोनध्रुवंपश्यतिखेनिशायाम् ॥ इंद्रायुधंवास्वयमेवरात्रौमासद्वये तस्यवदंतिनाशं ॥ ३४३ ॥

अर्थ–जो पुरुष रात्रीमें तारा गणोंको अच्छी तरहं प्रकाशित नहीं देखे और जो ध्रुवको नहीं देखे अथवा आपही रात्रीमे इंद्र धनुषको देखे वह दो महीनोंमें मरताहै ॥ ३४३ ॥

पादजानुगतंकर्मनकिंचिदपिचेष्टितम् ॥
मासांतेचमृतिस्तस्यकेनापिनविलंघ्यते ॥३४४॥

अर्थ–जो पैरोंमें तथा गोडोंमें प्राप्त हुए कर्मकी कछुभी चेष्टा न करै उसकी एकही महीनामें मृत्यु होती है किसी प्रकारसे देरी नहीं होती ॥ ३४४ ॥

कनिष्ठांगुलिपर्वाणिकृष्णस्यान्मध्यमंयदा ॥
तदायुःप्रोच्यतेपुंसामष्टादशदिनावधि ॥ ३४५॥

अर्थ–जिसकै कनिष्ट अंगुलीकी पोरी अथवा मध्यमा अंगुली काली हो जावे तिस पुरुषकी अठारह दिनकी आयु कहै ॥ ३४५ ॥

घृतेतैलेजलेवापिदर्पणेयस्तुपश्यति ॥
शिरोरहितमात्मानंपक्षमेकंसजीवति ॥ ३४६ ॥

अर्थ–जो पुरुष घृतमें तेलमें अथवा दर्पणमें अपनें शरीरको शिर रहित देखे वह पंदरह दिनतक जीवताहै ३४६

शैत्यंविदध्यात्तपनोपियस्यसंतापकारीकिलशीतरश्मी ॥ नज्ञायतेचेत्तुहिमंनचोष्णंसपक्षमेकंखलुतिष्ठतीह ॥ ३४७ ॥

अर्थ–जिसको सूर्यसेभी ठंढक लगे और चंद्रमासे गरमी मालूम होवे शीतल वा गरम वस्तुको नहीं पिछानें वह पंद्रह दिनतक जीवताहै ॥ ३४७ ॥

स्नानमात्रस्ययस्यैतेत्रयःशुष्यंतितत्क्षणात् ॥
त्हृदयंहस्तपादौचदशरात्रंसजीवति ॥ ३४८ ॥

अर्थ–स्नानमात्र करतेही जिसके हाथ पैर हृदा ये तीन वस्तु सूख जावें वह दश दिनतक जीवताहै ॥ ३४८ ॥

स्वरूपंपरनेत्रेतुपुत्तिकायांनपश्यति ॥
यदासच्छिन्नदृष्टिश्चतदामृत्युर्नसंशयः ॥ ३४९ ॥

अर्थ–जो पुरुष अपनें रूपको दूसरेके नेत्रकी पुतलियोंमें नहीं देखताहै ऐसा छिन्न दृष्टिवाला पुरुष शीघ्रही मरताहै इसमें संशय नहीं ॥ ३४९ ॥

अथातःसंप्रवक्षामिछायापुरुषलक्षणं ॥
येनविज्ञानमात्रेणत्रिकालज्ञोभवेन्नरः ॥ ३५० ॥

अर्थ–अब छायापुरुषके लक्षणको कहैंगे इसके जाननेंसे मनुष्य त्रिकालज्ञ होताहै ॥ ३५० ॥

कालोदूरस्थितोवापियेनोपायेनलक्ष्यते ॥
तंवदामिसमासेनयथादिष्टंशिवागमे ॥ ३५१ ॥

अर्थ–दूर स्थित हुआ काल जिस उपायसे जानाजाताहै तिस उपायको शिवशास्त्रमे अर्थात् कहेहुएको संक्षेपसे कहते है ॥ ३५१ ॥

एकांतंविजनंगत्वाकृत्वादित्यंचपृष्ठतः ॥ निरी
क्षयेनिजच्छायांकंठदेशेसमाहितः ॥ ३५२ ॥

अर्थ-एकांत वनमें जाके सूर्यको पीठ पीछे कर सावधान हो अपनी छायाको कंठदेशमें देखे ॥ ६५२ ॥

ततश्चाकाशमीक्षेतह्रींपरब्रह्मणेनमः ॥
अष्टोत्तरशतंजप्त्वाततःपश्येतशंकरं ॥ ३५३ ॥

अर्थ-फिर आकशमें देखै "ह्रींपरब्रह्मणेनमः इस मंत्रका अष्टोत्तर शत १०८ जप करके पीछे शिवजीको देख लेताहै ॥ ३५३ ॥

शुद्धस्फटिकसंकाशंनानारूपधरंहरं ॥
षण्मासाभ्यासयोगेनभूचराणांपतिर्भवेत् ॥
वर्षद्वयेनहेनाथकर्ताहर्तास्वयंप्रभुः ॥ ३५४ ॥

अर्थ-शुद्ध, सफेद मणिके समान कांतिवाले, अनेक रूपधारी महादेवको छह महीनोंके अभ्यास योगसे देखनेंसे भूचर प्राणियोंका पति हो जाताहै और ऐसेही दो वर्ष अभ्यास करनेसे आपही कर्त्ता हर्त्ता प्रभु हो जाताहै ॥ ३५४ ॥

त्रिकालज्ञत्वमाप्नोतिपरमानंदमेवच ॥
संतताभ्यासयोगेननास्तिकिंचित्सुदुर्लभं ॥ ३५५

अर्थ-निरंतर अभ्यास योग करनेंसे त्रिकालज्ञ होताहै और परमानंदको प्राप्त होताहै तिसको कछुभी दुर्लभ नहीं है ॥ ३५५ ॥

तद्रूपंकृष्णवर्णायपश्यतिव्योम्निनिर्मले ॥
षण्मासान्मृत्युमाप्नोतिसयोगीनात्रसंशयः॥३५६

अर्थ-जो योगी तिस महादेवके रूपको निर्मल आका-

शमें कृष्णवर्ण देखें वह छह महीनों भीतर मरताहै इसमें संदेह नहीं ॥ ३५६ ॥

पीतेव्याधिभयंरक्तेनीलेहानिविनिर्दिशेत् ॥
नानावर्णःस्वसिद्धश्चगीयतेचमहात्मनः॥३५७॥

अर्थ–पीतवर्ण देखे तो व्याधि होवे लालमें भय नीलेमें हानि जानना और जो अनेक प्रकारके वर्ण दीखें तो वह योगी सिद्धियोंको प्राप्त होता है ॥ ३५७ ॥

पदेगुल्फेचजठरेविनाशोक्रमशोभवेत् ॥
विनश्यतोयदाबाहोस्सजंतुर्म्रियतेध्रुवं ॥ ३५८ ॥

अर्थ–जो यदि छायामें पैर घुटने उदर इनको नहीं देखे तों अथवा दोनों भुजा कटी दीखें तो निश्चय आप मरताहै ॥ ३५८ ॥

वामबाहुतथाभार्याविनश्यतिनसंशयः ॥
दक्षिणेबंधुनाशोहिमृत्युर्मासेविनिर्दिशेत् ॥ ३५९

अर्थ–बायीं भुजा कटी दीखे तो स्त्री मरे दहीनी भुजा कटी दीखे तो एक महीनें भीतर बंधु मरे ॥ ३५९ ॥

अशिरोमासमरणंविनाजंघेदिनाष्टकं ॥
अष्टभिस्कंधनाशेनछायालोपेनतत्क्षणात् ॥ ३६०

अर्थ–शिर नहीं दीखे तो प्राण एक महीनामें मरे जंघा नहीं देखे तो आठही दिनमें मरे और जो कंधे नहीं दीखें तोभी आठ दिनमें मरे संपूर्ण छायाका लोप हो जावे तो उसी दिन मृत्यु जानना ॥ ३६० ॥

प्रातःपृष्ठगतेरवौचानिमिषंच्छायांगुलीमंतराद्दृष्ट्वार्धे
नमृतिस्त्वनंतरमहोछायानरंपश्यति ॥ तत्कर्णास

करास्यपार्श्वहृदयाभावेक्षणार्धात्स्वयं दिङ्मूढो
हिनरःक्षिप्रोविगमतोमासांस्तुषड्जीवति॥३६१॥

अर्थ– प्रातःकाल सूर्यको पीठ पीछे कर छायाको देखे तहां अंगुलियोंको नहीं देखे तो एक निमिषमें मृत्यु होवे और जो छायाको तथा अपनेंको नहीं देखे तो आधा क्षणमेंही मरे जो छाया पुरुषके कान कंधे हात मुख पांशु हृदा इनको नहीं देखे तो आधे क्षणमें मृत्यु होगी जो शिर नहीं दीखे तथा दिशाओंका ज्ञान नहीं रहे तो छह महीनोतक जीवता है ॥ ३६१ ॥ इति छाया पुरुष लक्षणम० ॥

एकादिषोडशाहानियदिभानुर्निरंतरं ॥
वहेद्यस्यचवैमृत्युःशेषाहेनचमासके ॥ ३६२ ॥

अर्थ–जिस पुरुषका नियमसे एक दिनसे लेके सोलह दिनपर्यंत सूर्यस्वरही चलता रहे उसकी पंदरह दिनमें मृत्यु होती है यह कालज्ञानमें कहाहै ॥ ३६२ ॥

संपूर्णोवहतेसूर्यश्चन्द्रमानैवदृश्यते ॥
पक्षेणजायतेमृत्युःकालज्ञानेनभाषितं ॥ ३६३ ॥

अर्थ–जिस पुरुषके सदा सूर्यस्वरही चले चंद्रमा कभी नहीं दीखे उसकी पंदरह दिनमें मृत्यु होतीहै ऐसा कालज्ञानमें कहाहै ॥ ३६३ ॥

मूत्रंपुरीषंवायुश्चसमकालंप्रवर्तते ॥
तदासौचलितोज्ञेयोदशाहेम्रियतेध्रुवं ॥ ३६४ ॥

अर्थ–जिस पुरुषका मलमूत्र वायु एकही वार निकसे तो वह चलित जानना दश दिनमें निश्चय मरताहै ॥ ३६४ ॥

संपूर्णंवहतेचंद्रःसूर्योनैवचदृश्यते ॥
मासेनजायतेमृत्युःकालज्ञानेनभाषितं ॥३६५॥

अर्थ–जो निरंतर चंद्रमाकास्वर चलताहो सूर्यस्वर नहीं चलता होवे तो एक महीनेंमें मृत्यु होतीहै ऐसे कालज्ञान वालोंनें कहाहै ॥ ३६५ ॥

अरुंधतिंध्रुवंचैवतत्रीयंविष्णुपत्तथा ॥ आयुर्हीनानपश्यंतिचतुर्थंमातृमंडलं ॥ ३६६ ॥

अर्थ– अरुंधती ध्रुव तीसरा विष्णुपद, चौथा मातृमंडल इनको आयुहीन पुरुष नहीं देखते है ॥ ३६६ ॥

अरुंधतीभवेजिव्हाध्रुवोनासाग्रमेवच ॥
भ्रुवौविष्णुपदंज्ञेयंतारकंमातृमंडलं ॥ ३६७ ॥

अर्थ–जिव्हा अरुंधती है नासिकाका अग्रभाग और भ्रुवों-को विष्णुपद कहतेहै ताराओंको मात्रमंडल जानना ॥३६७॥

नवभ्रुवंसप्तघोषंपंचतारांत्रिनासिकां ॥
जिव्हामेकदिनंप्रोक्तंम्रियतेमानवोध्रुवं ॥ ३६८ ॥

अर्थ–भ्रुकुटी न देखे तो नव दिन कानोकेअंदरका शब्द न सुने तो सात दिन तारा न देखे तो पांच दिन नासिका न देखे तो तीन दिन जिव्हा न देखे तो एक दिन मनुष्यका मरण समय कहाहै ॥ ३६८ ॥

कोणमक्ष्णोरंगुलीभ्यांकिंचित्पीड्यनिरीक्षयेत् ॥
ययानदृश्यतेबिंदुर्दशाहेनभवेन्मृतिः ॥ ३६९ ॥

अर्थ–आखोंके कोईयोंको अंगुलियोंसे कछु दबाके देखै जो यदि मसलके दबानेंसे आंखमांहसे जलकी बिंदु न निकले तो दश दिन भीतर मृत्यु जाननी ॥ ३६९ ॥

तीर्थस्नानेनदानेनतपसासुव्रतेनवा ॥
जपैर्ध्यानेनयोगेनजायतेकालवंचना ॥ ३७० ॥

अर्थ-तीर्थोंका स्नान दान तप सुकृत जप ध्यान योग इन्हों करके काल वंचन हट सकताहै ॥ ३७० ॥

शरीरंनाशयंत्येतेदोषाधातुमलस्तथा ॥
समस्तवायुर्विज्ञेयोबलतेजोविवर्द्धनः ॥ ३७१ ॥

अर्थ-धातु तथा मलआदि दोष शरीरको नष्ट करतेहै और समस्त प्राणआदि वायु बल तथा तेजको बढानेंवाले जानने ॥ ३७१ ॥

रक्षणीयस्ततोदेहोयतोधर्मादिसाधनम् ॥
रोगाजाप्यत्वमायांतिसाध्याजाप्यस्त्वसाध्यतां ॥
आसाध्याजीवितंघ्नंतिनतत्रास्तिप्रतिक्रिया३७२

अर्थ-जो कि यह देह धर्मादिकोंको सिद्ध करनेंवालाहै इसलियें यह देह रक्षित करनाही योग्यहै शरीरके साध्य रोगोंकी चिकित्सा न की जावे तो वे जाप्य, हो जाते है जाप्य संसक रोग चिंकित्साकियेविना असाध्यहो जातेहै फिर वे असाध्य रोग जीवनको नष्ट कर देतेंहै उनकी कछु चिकित्सा नहीं है ॥ ३७२ ॥

येषांहृदिस्फुरंतिशाश्वतमंद्वितीयास्तेजस्तमोनिवहनाशकरंरहस्यं॥ तेषामखंडशशिरम्यसुकांतिभाजांस्वप्नेपिनोभवतिकालभयंनराणां ॥ ३७३ ॥

अर्थ-जिन पुरुषोंके हृदयसे सनातन अद्वितीय, तमोगुणके समूहको नाशकरनेंवाला रहस्य स्वरोदयज्ञान फुरताहै पूर्णचंद्रमाके समान कांतिवाले तिन पुरुषोंको सुपनेंमेंभी कालका भय नहीं होताहै ॥ ३७३ ॥

॥ अथनाडीज्ञानं ॥

इडागंगेतिविज्ञेयापिंगलायमुनानदी ॥

मध्येसरस्वतीविद्यात्प्रयागादिसमंतथा ॥३७४॥

अर्थ-इडानाडी गंगास्वरूप जाननी पिंगला यमुना नदी जाननी मध्यमें सुषुम्णा सरस्वती जाननी इन तीन नाडी-योंके समागमको प्रयाग जानना ॥ ३७४ ॥

आदौसाधनमाख्यातंसद्यःप्रत्ययकारकम् ॥
बद्धपद्मासनोयोगीबंधयेदुड्डियानकं ॥ ३७५ ॥

अर्थ-पहले साधनही तात्काल निश्चयका कारण कहाहै इसलीयें योगीजन पद्मासन बांधके उड्डियानक आसनको बांधे अर्थात् अपानवायुंकूं ऊपरको चढावे ॥ ३७५ ॥

पूरकःकुंभकश्चैवरेचकश्चतृतीयकः ॥
ज्ञातव्योयोगिभिर्नित्यंदेहसंसिद्धिहेतवे ॥३७६॥

अर्थ-पूरक कुंभक तीसरा रेचक ऐसे ये तीन प्राणायाम योगीजनकोनित्यअति देहकीशुद्धिकेवास्ते जानने चाहियें ७६

पूरकःकुरुतेपुष्टिःधातुसाम्यंतथैवच ॥
कुंभकेस्तंभनंकुर्याज्जीवरक्षाविवर्धनं ॥ ३७७ ॥

अर्थ-पूरक प्राणायाम बाहिरकी वायुको भीतरको खेंचताहै तब पुष्टि अर्थात् देहको पोषताहै और धातुओंको समान करताहै कुंभकमें वायुका धारण करना यानें वायु बंद रखनी इससे जीवकी रक्षाकी वृद्धि होती है ॥ ३७७ ॥

रेचकोहरतेतापंकुर्याद्योगपदंव्रजेत् ॥
पश्चात्संग्रामवत्तिष्ठेल्लयबंधंचकारयेत् ॥ ३७८ ॥

अर्थ-रेचकमें बाहिरको वायु छोडी जातीहै यह प्राणा-याम पापको हरताहै ऐसे प्राणायाम करनेंवालेको योगपद

की प्राप्ति होतीहै ऐसे प्राणायाम कर पीछे समान रूपसे स्थित रहै ऐसा योगी मृत्युको बंद करताहै ॥ ३७८ ॥

कुंभयेत्सहजंवायुंयथाशक्तिप्रकल्पयेत् ॥
रेचयेचंद्रमार्गेणसूर्येणापूरयेत्सुधीः ॥ ३७९ ॥

अर्थ–अपनें स्वाभाविक प्राणवायुको अपनी शक्तिके अनुसार कुंभक प्राणायाममें रोके और चंद्रमाके स्वर करके वायुको छांडे सूर्यके स्वरसे चढावे ॥ ३७९ ॥

चंद्रंपिबतिसूर्यश्चसूर्यंपिबतिचंद्रमाः ॥
अन्योन्यकालभावेनजीवेदाचंद्रतारकं ॥ ३८० ॥

अर्थ–जो चंद्रमाके स्वरमें सूर्यस्वरको चलाने लगजावे औरसुर्यस्वर चलतें समय चंद्रमाका स्वर चलानें लगजावे ऐसा योगीजन परस्पर स्मरके कालका अभाव होनें करके चंद्रमा तथा तारागणोंकी स्थिति रहे तबतक जीवताहै ३८०

स्वीयांगेवहतेनाडीतन्नाडीरोधनंकुरु ॥
मुखबंधमसुंचन्वैपवनंजायतेयुवा ॥ ३८१ ॥

अर्थ–जो योगीजन जोनसास्वर चलताहो उस नाडी-स्वरको बंदकर मुखको बंदकर वायुको नहीं छोडता रह-ताहै वह, वृद्धभी जुवान हो जाताहै ॥ ३८१ ॥

मुखनासाक्षिकर्णानामंगुलीभिर्निरोधयेत् ॥
तत्वोदयमितिज्ञेयंसन्मुखीकरणंप्रिये ॥ ३८२ ॥

अर्थ–मुख नासिका नेत्र कान इनको अंगुलियों करके रोकें इसीको तत्वोदय और प्रिय षणमुखीकरण जानना ३८२

तस्यरूपंगतीस्वेदोमंडलंदक्षिणांत्विदं ॥
योवेत्तिमानवोलोकेसंसर्गादपिमार्गवित् ॥ ३८३ ॥

अर्थ—उस योगीका लक्षण यह है कि वह योगी तत्वोंका रूप गति स्वाद मंडल इनसाबोंके जानताहै और तत्वोंके संसर्ग, मिलापके मार्गकोभी जानताहै ॥ ३८३ ॥

निराशीनिष्फलंयोगीनकिंचिदपिचिंतयेत् ॥
वासनामुन्मनांकृत्वाकालंजयतिलीलया॥३८४

अर्थ—जो आशारहित निष्पाप योगी कछुभी वासना चितवन नहीं करताहै वह योगी अपनी लीला क्रीडासहीत कालको व्यतीत करता है ॥ ३८४ ॥

विश्वस्ववेदिकाशक्तिर्नेत्राभ्यांपरिदृश्यते ॥
तत्रस्थंतुमनोयस्ययामभात्रंभवेदिह ॥ ३८५ ॥

अर्थ—तहां समाधिमें जिस योगीका मन एक प्रहर ठहरताहै उसको संपूर्ण जगत्को जाननेंकी शक्ति नेत्रोंसे होतीहै ॥ ३८५ ॥

तस्यायुर्वर्धतेनित्यंघटिकात्रयमानतः ॥
शिवेनोक्तंपुरातंत्रेसिद्धस्यगुणगव्हरे ॥ ३८६ ॥

अर्थ—उस योगीकी नित्यप्रति तीन घटी प्रमाण आयु बढती है यह पहले सिद्धोंके गुणगव्हर तंत्रमें शिवजीनें कहीहै ॥ ३८६ ॥

बद्धंपद्मासनस्थंगुदगतपवनंसंनिरुध्योर्ध्वमुच्चैः
तंतस्यापानरंध्रेक्रमजितमनिलंप्राणशक्त्यानिरु
ध्य॥एकीभूतंसुषुम्णाविवरमुपगतंब्रह्मरंध्रेचनी
त्वानिक्षिप्याकाशमार्गेशिवचरणरतायांतितेके
पिधन्याः ॥ ३८७ ॥

अर्थ—योगीजन पद्मासनको बांधके पीछे गुदामें स्थित

हुए अपान वायुको रोकके ऊपरको लेजाय अपानरंध्रमें क्रमसे जीती हुई तिस वायुको प्राणशक्तिसे रोकके दोनुवों-की एक गतिकर सुषुम्णानाडीके छिद्रमें प्राप्तकर पीछे ब्रह्मरंध्रमें प्राप्तकर पीछे शिवचरणमें रतहुए जो योगी-जन आकाश मार्गमें जाते हैं अर्थात् प्राण छोडते हैं वे धन्यहै ॥ ३८७ ॥

एतज्ज्ञानातियोयोगीएतत्पठतिनित्यशः ॥
सर्वदुःखविनिर्मुक्तोलभतेवांछितंफलं ॥ ३८८ ॥

अर्थ—जो योगी इस शास्त्रको जानताहै और इसको नित्य पढताहै वह सब दुःखोसे विनिर्मुक्त हुआ वांछित फलको प्राप्त होता है ॥ ३८८ ॥

स्वरज्ञानशिरोयस्यलक्ष्मीकरतलेभवेत् ॥
सर्वत्रचशरीरेपिसुखंतस्यसदाभवेत् ॥ ३८९ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यमें स्वरज्ञान है उसके पैरोंके तलवोंमे लक्ष्मी है और सब शरीरोंमें उसको सदा सुख रहताहै३८९

प्रणवःसर्ववेदानांब्राह्मणोभास्करोयथा ॥
मृत्युलोकेतथापूज्यःस्वरज्ञानीपुमानपि ॥ ३९०

अर्थ—सब वेदोंमें जैसे ॐकार और ब्राह्मण तथा सूर्य जैसे पूजितहै इसी तरंह मृत्युलोकमें स्वरज्ञानी पुरुषभी पूज्य है ॥ ३९० ॥

नाडीत्रयंविजानातितत्वज्ञानंतथैवच ॥
नैवतेनभवेत्तुल्यंलक्षकोटिरसायनं ॥ ३९१ ॥

अर्थ—तीनों नाडी तथा तत्वज्ञानको जो जानताहै उसके समान लाखों किरोडों कोई रसायन नहीं हे ॥ ३९१ ॥

एकाक्षरप्रदातारंनाडिभेदनिवेदकं ॥
पृथिव्यांनास्तितद्द्रव्यंयद्दत्वाचानृणोभवेत्॥३९२

अर्थ—नाडीभेदके एक अक्षरको देनेवालेके समानभी कोई द्रव्य ऐसा नहीं है कि जिससे अनृणी होवे ॥३९२॥

स्वरतत्वंतथायुद्धंदेविवश्यस्त्रियस्तथा ॥
गर्भमागमनंरोगंकालाख्यानंतथोच्यते ॥३९३॥

अर्थ—हे देवि इसमें क्रमसे स्वरज्ञान तत्वज्ञान स्त्रीवशीकरण गर्भ, गमन, आगमन, रोग, कालज्ञान, इत्यादिक, प्रकरण कहे है ॥ ३९३ ॥

एवंप्रवर्तितंलोकेप्रसिद्धंसिद्धयोगिभि ॥
चंद्रार्कग्रहणेजाप्यंपठतीसिद्धिदायकं ॥ ३९४ ॥

अर्थ—ऐसे लोकमें प्रवृत्त हुआ सिद्धयोगी जनोंसे प्रसिद्ध यह स्वरोदय चंद्र तथा सूर्यग्रहणमें जपना इसके पढनेवालोंके सिद्धि होती है ॥ ३९४ ॥

स्वस्थानेतुसमासीनोनिद्राभाहारमल्पकः ॥
चिंतयेत्परमात्मानंयोवेदसभविष्यति ॥ ३९५ ॥

इतिश्रीउमामहेश्वरसंवादेस्वरज्ञानं समाप्तम्
शुभम्भूयात् ।

अर्थ—आपनें स्थानमें बैठाहुआ स्वल्प निद्रा और स्वल्प आहारवाला योगीजन जो परमात्माका चिंतवन करताहैं वह कहैं सोही होगा ॥ ३९५ ॥

इति श्रीउमामहेश्वरसंवादे शिवस्वरोदये बेरीनिवासी बस्तीरामकृत भाषाटीका समाप्ता.

सं० १९५२ मि. माघशु. १५ शुक्रवार.

जाहिरात.

समस्त सज्जन लोगोंको जाहिर करनेमें आता है की "योगचिंतामणी" नामक वैद्यक ग्रंथ हमारे यहां केदीनोंसे छपता है जिसकी तीन आवृत्ति छपचूकी और बिकभीगयी, परंतु कईएक महाशयोंकी सूचनाब-होत दीनोंसे चली आती है की, यह जो बचनिकायुक्त ग्रंथ है सो यदि सरल हिंदीभाषामें होवे, और संपूर्ण श्लोकोंका खुलासेवार अर्थ लिखाजावे तो इसका उप-योग लोगोंको बहोतही होगा ऐसी सूचनासे हमने अबकी आवृत्तीमें विपुल द्रव्य खर्च करके सुचनानुसार ग्रंथ तैयार किया जोकि पुस्तक पहेलेसे डेढा बढगया तोभी लोगोंको सुगम पडनेके अर्थ कींमत रु० १॥ टपाल ४ आना रख्खाहै.

नवरात्रपद्धति—अतिउत्तम छपके तैयारहै. जि-समें चारों वर्णोंनें नवरात्र पूजन करनेका क्रम लिखा है. किंमत ६ आना टपालखर्च. १ आना.

चांद्रायणव्रतकथा—भाषाटीकासह किंमत १॥ आना, टपालखर्च ॥ आधा आना.

अंत्येष्टि—इसमें मरणसे लेकर वर्षश्राद्धतकके सब विषय हैं. किं० ५ आना टपाल खर्च १ आना.

पंडित श्रीधर शिवलाल.

ज्ञानसागर छापखाना. [मुंबई.]

SP 62

प्रस्तावना.

इस असार संसारमें कुछभीअपने देहका साधनकर लेना चाहीये यहबात सत्य है, तथापी कलिकालमें समाधि जप तपादि साधन अत्यंत दुर्घट होपडे हैं तो धन, यश मोक्षको देनेवाला यह शिवपार्बती संवादरुप जो 'स्वरोदय' शास्त्रहै इससे मनुष्योंके वांछितार्थ अवश्य सिद्ध होवेंगे ऐसा बिचार कर प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक तलाशकर उसपरस यह भाषांतर बनवाकर लोकहितार्थ सादर कियाहै आशाहै, कीं, इसमें कहे हुये विधिकें अनुसार जो लोग इसका उपयोग करेंगे तो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष यह करतलामल तुल्य होवेंगे, क्योंकी साक्षात् शिवजीके मुखसे निकलेहुए विषय हैं. इस शास्त्रको 'निगम ऐसी संज्ञा है. निगम उसको कहिये की जो-(आगतं शिववक्त्राच्चुगतंच गिरिजामुखे) तो इस ग्रंथको गुरुमुखसे समझकर इसका उपयोग करें यह मेरी प्रार्थना है.

पंडित श्रीधर शिवलाल.

ज्ञानसागर छापखाना.

(मुंबई.)